अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

हमारी प्रतिज्ञा

हमारी देह तब तक इसी तरह इस काम में निरंतर लगी रहेगी, जब तक स्वराज्य का रूपांतर ग्रामराज्य में नहीं होगा। —विनोबा

वर्ष-३, अंक-३१ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, ३ मई, '५७
सौर वैशाख १३, शके १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति का २ आना

[निम्न मानचित्र में जिलों के नाम के नीचे, उस जिले में प्राप्त कुल ग्रामदानी गाँवों की संख्या है। मानचित्र में कुछ प्रांतों की संख्याओं में एवं दाहिनी ओर की जोड़ में कुछ फर्क है, जिसका कारण है, जोड़ के अंक ताजे हैं, जो नक्शे में नहीं जुड़ पाये। --सं०]

भारत में ग्रामदान

अप्रैल १९५७ तक

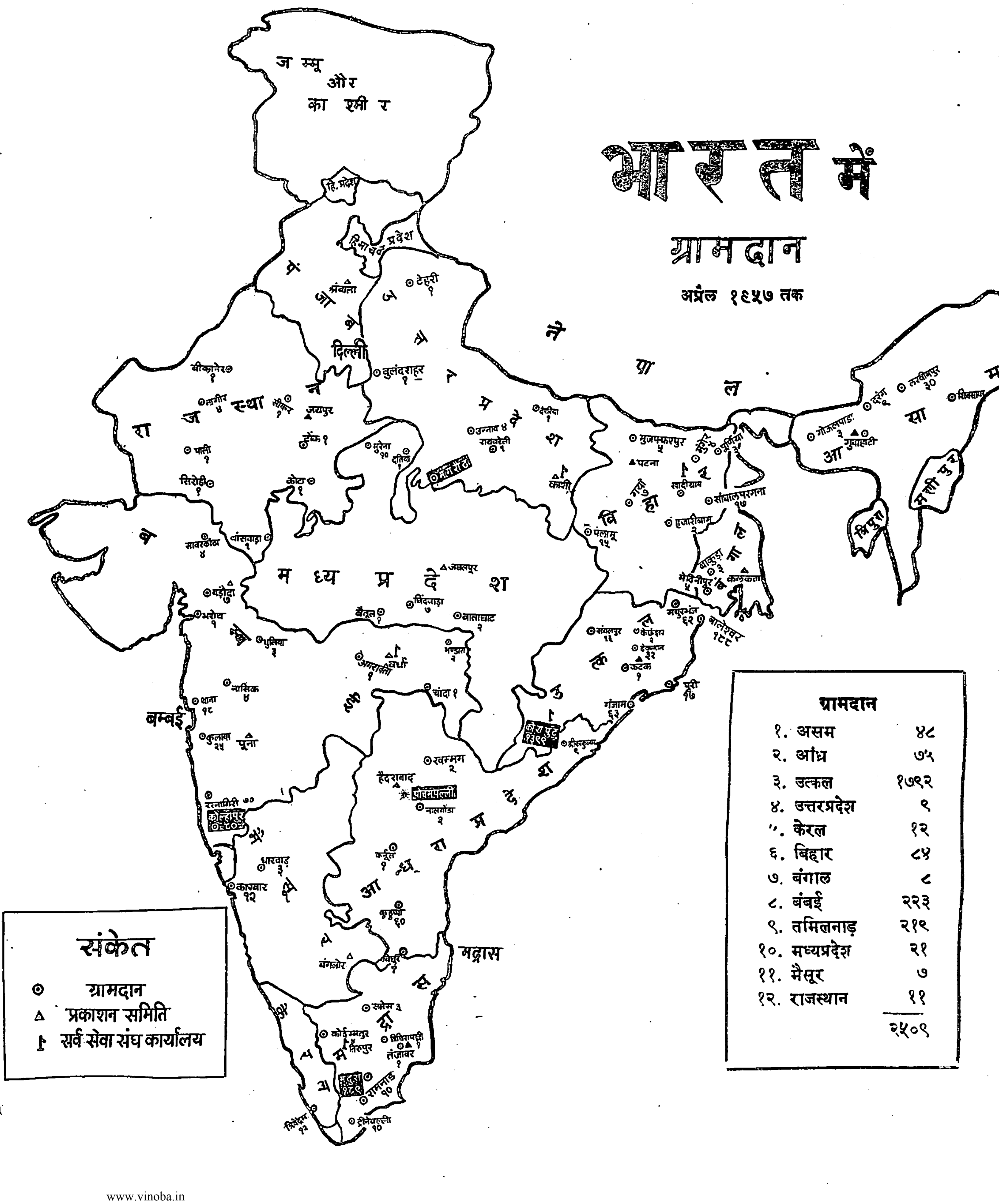

ग्रामदान	
१. असम	४८
२. आंध्र	७५
३. उत्कल	१७९२
४. उत्तरप्रदेश	९
५. केरल	१२
६. बिहार	८४
७. बंगाल	८
८. बंबई	२२३
९. तमिलनाड़	२१९
१०. मध्यप्रदेश	२१
११. मैसूर	७
१२. राजस्थान	११
	२५०९

www.vinoba.in

तमिलनाड की विदाई-वेला में—

(विनोबा)

तमिळनाड की इस यात्रा का आज आखिरी दिन है। ११ महीनों से हमारी यात्रा यहाँ चल रही है। कोई चालीस साल पहले शास्त्र में एक वाक्य पढ़ा था—"एकाकी पौरुषं कुर्यात।" मनुष्य को दुनिया में जो भी पुरुषार्थ-साधन करना है, अकेले ही करना चाहिए। उसके बाद बुद्ध भगवान् का एक वाक्य पढ़ा—"अको चरे खग्ग विसाण-कप्पो।" जैसे गेंडे को एक ही सींग होता है, वैसे ही यति को अकेले ही घूमना चाहिए। भगवान् बुद्ध को बोधगया में बोधि-लब्धि हुई। उस समय उनकी उम्र तीस साल की थी। इहलोक छोड़ा, तब अस्सी साल की उम्र थी। वे पचास साल घूमते रहे। वे इतना घूमे कि हिंदुस्तान के एक पूरे प्रदेश को "विहार" नाम दिया गया। विहार याने विचरण का स्थान। दुनिया में ऐसी दूसरी मिसालें सुनने में नहीं आयी कि किसी महापुरुष के घूमने के स्मरण में एक प्रदेश को ही नाम मिला हो। उनका आदेश अकेले घूमने का था। यह प्रेरणा हमें बचपन से ही मिली है। उसका मौका भूदान-यज्ञ ने दिया। शास्त्र ने और बुद्ध भगवान् ने जो आदेश दिया, उसका अर्थ हमने अपने ढंग से समझा।

घूमने का समावेशक अर्थ

शब्द के कुछ अर्थ समावेशक होते हैं, कुछ व्यावर्तक। शास्त्र के इस आदेश का व्यावर्तक अर्थ होता है—दूसरे सबसे अलग होकर अकेले घूमना चाहिए। ऐसा ही अर्थ बहुतों ने किया है। हम वैसा अर्थ नहीं समझे। हम समावेशक अर्थ समझे। इस दुनिया में हम ही हम हैं, इस तरह व्यापक रूप से हमने घूमने का अर्थ लिया। गीता के बारहवें अध्याय में भक्त का लक्षण है—"अनिकेत: स्थिरमति:"—जिसका घर नहीं है, वह स्थिर-बुद्धि है। शरीर घूमता रहता है, पर बुद्धि एक स्थान पर स्थिर है। "उसका घर नहीं," ऐसा वाक्य गीता में आया है और ज्ञानदेव ने 'ज्ञानेश्वरी' में उसका अर्थ समझाया है—"विचरे विश्व होउनि विश्वामाजी"—विश्वरूप होकर विश्व में घूमे। 'घर नहीं' का अर्थ है, विश्व ही अपना घर है। शास्त्र-वचनों के अर्थ समावेशक लेने होते हैं, यह खूबी 'ज्ञानेश्वरी' में दीख पड़ती है।

तमिळनाड की इस यात्रा में इसी भावना से हम घूमे कि सारा समाज हमारा ही रूप है। इसका परिणाम ऊँचा हुआ। यहाँ कोई तीन-साढ़े तीन सौ सभाएँ हुई होंगी। हमें एक भी ऐसी सभा याद नहीं, जिसमें स्कूल-कॉलेज के नौजवान विद्यार्थी होने पर भी थोड़ी भी गड़बड़ या अशांति हुई हो।

सब लोग राष्ट्रभाषा सीखें

तीन महीने हमारे 'तिरुवाचकम' के अध्ययन में गये। कम-से-कम रोज दो घंटे तो देता ही था। उसमें ६००–६५० भजन हैं, जिनमें से १५० तो हमें कंठस्थ हो गये। कुछ कई दफा बोले भी और पढ़े भी। फिर भी तमिळ में बोल नहीं सकता। बोलने का अभ्यास दूसरे ही ढंग से करना होता है। उसके लिए अवकाश नहीं मिला। कोई भी भाषा हम आध्यात्मिक सार लेने के लिए सीखते हैं। हिंदुस्तान में १३-१४ भाषाएँ हैं। सबका अध्ययन करने की हमने कोशिश की है। सबका आध्यात्मिक साहित्य पिया है। बोलने में यह अध्ययन मदद नहीं करता। हम ऐसी अपेक्षा भी नहीं कर सकते कि कोई १४ भाषाओं में भाषण करेगा। अपेक्षा तो मातृभाषा के अलावा हिंदी के अच्छे ज्ञान की है। सिर्फ मातृभाषा का जिसे ज्ञान है, उसे हम एकाक्ष एक आँख वाला कहते हैं। राष्ट्रभाषा के साथ मातृभाषा जानने वाला दो आँखों वाला है और जो आध्यात्मिक ज्ञान-संपन्न संस्कृत भाषा भी जानता है, वह तीन आँखों वाला है। मेरे जैसा, जो थोड़ी-सी अंग्रेजी भाषा जानता है, उसे चश्मा मिल गया, ऐसा कहना होगा।

तमिळनाड के लोगों को फौरन हिंदी सीखनी चाहिए। यहाँ के श्रेष्ठ महापुरुष थे नम्मळवार। उनके शिष्य के शिष्य के शिष्य थे रामानुज। उन्हें सब जानते हैं। नम्मळवार का भक्ति-मार्ग रामानुज को उसके गुरु ने सिखाया। रामानुज ने उसे सारे हिंदुस्तान में फैलाया। कबीर, तुलसी तो रामानुज के संप्रदाय के हैं। रामानुज ने अपना प्रचार कैसे किया? संस्कृत भाषा द्वारा। संस्कृत उत्तर की भाषा है, लेकिन शंकर-रामानुज ने संस्कृत में जिस योग्यता के ग्रंथ लिखे, उत्तर में किसीने उस योग्यता के ग्रंथ नहीं लिखे। उन दिनों राष्ट्रभाषा संस्कृत थी। संस्कृत के जरिये प्रचार किया, तो सारे भारत में संदेश फैला।

तमिळनाड का संदेश

आज भी तमिळनाड के पास संदेश है—सादगी का, भक्ति-भावना का, व्यक्तिगत मालकियत न रखने का। पर कैसे फैलेगा यह संदेश? हिंदी के आश्रय के बिना यह संदेश नहीं फैलेगा। यह बात हमने जगह-जगह समझायी है। जहाँ विरोध था, वहाँ भी समझाया है। लोगों ने शांति से सुना है। मुझे कहना यह है कि तमिळ में आपके सामने बोलूँ, ऐसी अपेक्षा नहीं। जो अध्ययन किया, वह आध्यात्मिक साहित्य में ओतप्रोत होने के लिए। तीन महीने 'तिरुवाचकम'का अध्ययन क्यों किया? इसलिए कि मैंने खुद को तमिळ मनुष्य मान लिया। सामने जो श्रोता है, वह मेरा ही हिस्सा है, यह मानने की मैंने कोशिश की। तमिळों का जो सर्वश्रेष्ठ विचार है, उसका अध्ययन करना, मैंने अपना धर्म समझा। इस प्रयत्न के फलस्वरूप मैंने तमिळनाड का प्रेम पाया। यात्रा का वर्णन करने में शब्द असमर्थ हैं। स्थूल परिणाम लोगों के सामने है। वह आँकड़ों में बताया जा सकता है। लेकिन यात्रा का बहुत ही सुंदर और महत्त्व का परिणाम यह हुआ कि यहाँ ऐसे पाँच-पचास कार्यकर्ता निकल पड़े हैं, जो निष्काम सेवा करना चाहते हैं। वे समझ गये हैं कि हिंदुस्तान की आवश्यकता क्या है?

राम के बन्दर

पाँच साल पहले हमारी यात्रा उत्तर-प्रदेश में चलती थी। जगन्नाथन् स्वयं खिंच कर ४-५ महीने वहाँ आकर रहे। जगन्नाथन् कोई बड़े नेता तो है नहीं। पचासों कार्यकर्ताओं में से वे एक हैं। उन्होंने देखा कि लोगों ने भूदान की वर्षा बरसायी। वहाँ से तमिळनाड वापिस आने लगे, तो कहने लगे—"जा तो रहा हूँ, लेकिन जमीन मिलेगी या नहीं, इसमें सन्देह है।" मैंने कहा, 'वहाँ कावेरी है या नहीं? गंगा की ही तरह कावेरी की भी महिमा है। जैसे यहाँ भटके, वैसे ही वहाँ भी भटकने से परिणाम मिलेगा।' बोले—"मेरी हस्ती ही क्या है?" मैंने कहा—'राम का काम बंदरों ने किया!' जगन्नाथन् को जैसा लगा वैसा ही माणिक्यवाचकर को भी लगा था कि 'मैं कौन हूँ, मेरे से क्या होगा?' ऐसे नम्र पुरुषों से भगवान् काम लेते हैं। माणिक्य-वाचकर का बड़ा सुंदर वाक्य है—"नान् यार एन उल्लम यार एन्नैयार आरीवर।"—उस परमेश्वर ने मेरे पर राज्य नहीं चलाया होता, मुझ पर क़ब्जा नहीं किया होता, तो मैं कौन होता? तो जो शून्य बनेगा, उसे परमेश्वर उठा लेगा, इस विश्वास से वे आये। अब पाँच-पचास लोग उनके साथ हो गये हैं।

ग्रामदान से ही रचनात्मक काम सम्भव

अभी श्री एस० के० दे आये थे। वे ग्रामदानवाला एक गाँव देखने गये थे। वहाँ उन्होंने जनता से पूछा—"क्या आप लोग भूमिहीनों को भूमि देंगे?" लोगों ने उत्तर दिया—"इतना न समझे होते कि भूमिहीनों को भूमि देनी है, तो ग्रामदान क्यों करते? सबको जमीन मिलनी चाहिए।" यह उत्तर सुन कर उनके आनन्द का पार नहीं रहा। उन्होंने कहा कि 'कम्युनिटी प्रोजेक्ट' ऊपर-ऊपर का काम करते हैं। जहाँ 'कम्युनिटी' ही नहीं, वहाँ योजना क्या चलेगी? जहाँ ग्रामदान हुआ है, वहाँ 'कम्युनिटी' बनती है। वास्तव में कम्युनिटी प्रोजेक्ट तो ऐसे ग्रामदानी गाँव में ही हो सकते हैं।" तमिळनाड का वातावरण यहाँ तक बदल गया। यह काम किनके जरिये हुआ? सर्वसाधारण कार्यकर्ताओं द्वारा ही उनमें भक्ति और निष्ठा तथा निष्काम काम की भावना पैदा हुई। दूसरा ज्ञान यह पैदा हुआ कि सर्वोदय और रचनात्मक काम ग्रामदान के आधार पर ही खड़ा हो सकता है।

ग्रामराज्य का संकल्प

कन्याकुमारी में हम दो दिन रहे। दूसरे दिन हम समुद्र पर गये। सूर्यनारायण का उदय हो रहा था। समुद्र कन्याकुमारी के चरणों को धो रहा था। सबकी हमने उपस्थिति में ग्रामराज्य का संकल्प, प्रतिज्ञा की :

> "हमारी देह तब तक इसी तरह से इस काम में निरंतर लगी रहेगी, जब तक स्वराज्य का रूपांतर ग्रामराज्य में नहीं होगा।"

इस संकल्प के बाद हम बहुत ताजगी अनुभव कर रहे हैं। थकान है ही नहीं।

सर्वोदय में जिनका विश्वास है, उनका धर्म है कि हिंदुस्तान की भूमि का यह मसला सब मिल कर कम-से-कम समय में हल करें। इसे जितना टालने की कोशिश

www.vinoba.in

करेंगे, उतने ही वे बेकार साबित होंगे। कानून मसला हल नहीं कर सकता, यह बात समझनी है। प्रेम बढ़ाने में उससे मदद हो सकती है, परंतु काम तो हमें प्रेम से ही करना है। प्रेम की यह शक्ति प्रकट हो सकती है, ऐसा अनुभव आया है।

भंगी का काम : उपासना

मैंने अपनी जवानी के तीस साल खादी-ग्रामोद्योग के कामों में बिताये। प्रचार की कोई वासना कभी नहीं हुई। आज गांधीजी होते, तो मैं सुरगाँव में भंगी का काम ही करता होता। सूर्यनारायण की एकाग्रता से मैं वह काम करता था। आश्रम से तीन मील दूर कंधे पर फावड़ा लेकर जाता था। घंटा-डेढ़ घंटा काम करके वापिस आता। एक बार जोरों की बारिश हुई। बीच में एक नाला था। उसे पार करके गाँव में जाना होता था। सारे रास्ते में कमर भर पानी हो गया। नाले में जोरों से पानी बह रहा था। नाले के किनारे खड़े होकर गाँव के एक आदमी को पुकारा। गाँव में मैं जा नहीं सकता था। गाँव में एक मंदिर था। उससे कहा—"भगवान् को सुना आओ कि गाँव का भंगी आया था, पर पानी होने से गाँव में नहीं आ सकता।" उसने कहा—"हाँ, बताऊँगा।" मैंने पूछा—"क्या बताओगे?" तो बोला—"कहूँगा कि बाबाजी आये थे।" हमने कहा कि "तुम गलत समझे। कहो कि गाँव का भंगी भंगी का काम करने आया था। बाढ़ के कारण गाँव में नहीं आ सकता।" फिर मैं लौटा। रास्ते में कमर भर पानी था और जाहिर था कि हम गाँव में नहीं जा सकते। फिर भी निश्चय किया कि वहाँ पहुँचे बिना लौटना नहीं है। वह उपासना थी। लोगों ने पूछा कि आपका यह प्रोग्राम कब तक चलेगा? हमने कहा कि हमारा प्रोग्राम बीस साल का है, क्योंकि लोगों की मनोवृत्ति बदलने की बात है। डेढ़ साल तक काम चला। उसके बाद गांधीजी गये, तो दूसरे काम में आना पड़ा। सुबह के पाँच-छः घंटे हमारे उस काम में जाते थे। कभी लोग सलाह-मशविरा करना चाहते थे, तो उनसे कह दिया था कि ग्यारह बजे के पहले समय नहीं है, क्योंकि भंगी-काम उपासना का समय था। सुरगाँववालों ने पूछा कि 'आप इतना आग्रह क्यों रखते हैं?' हमने कहा कि इतनी गंदी आदतें जो हैं हमारी! जैसे सूर्य को छुट्टी नहीं, वैसे ही आपके भंगी को भी छुट्टी नहीं। लोगों की दृष्टि से यह छोटा काम है, लेकिन हमने एक दिन भी छुट्टी नहीं ली, क्योंकि हम उसे 'उपासना' समझते थे। भूदान-यज्ञ में भी हमने उपासना का यही आदर्श रखा है। जब तक साँस चलती है, तब तक यह काम चलाना है।

भगवत्-सेवा का आनंद

गांधीजी की मृत्यु के बाद जब मैं बाहर घूमने लगा तब हमारे एक बूढ़े मित्र पवनार गाँव में रोज भंगी का काम करने जाते थे। पहले पाँच साथी उन्हें मिल जाते थे। सात-आठ महीने की सेवा का क्या परिणाम हुआ? गाँव के लोग बैठे रहें और ये मैला उठाते रहे—उठाना इनका काम और गंदा करना उनका काम! उनकी आदत में कोई फरक नहीं पड़ा। इतना ही हुआ कि पहलेवाले ४-५ साथी छूट गये! उस महापुरुष ने हमें पत्र लिखा—"अब तो बहुत ही ज्यादा आनंद मिलता है। पहले ४-५ साथी थे, तो हमें ऐसा लगता था कि हम समाज-सेवा कर रहे हैं, अब कोई साथ नहीं है, तो अनुभव ऐसा आता है कि हम भगवान् की सेवा कर रहे हैं, क्योंकि अब सब स्वामी हैं और हम सेवक हैं। पहले समाज-सेवा का आनन्द था, अब भगवत्-सेवा का आनन्द है।" पत्र पढ़ते ही मेरी आँखों में आँसू भर आये। वे ७८ साल के होकर मर गये हैं। मैं जब की बात बता रहा हूँ, तब वे ७२ साल के रहे होंगे। गांधीजी ने ऐसे पुरुष पैदा किये।

गांधीजी का असर

लोग पूछते हैं कि गांधीजी का भारत पर क्या असर है? महापुरुष का असर ऐसे तौला नहीं जाता। बुद्ध भगवान् का असर अब हो रहा है। २५०० साल के बाद उनकी जयंती मनायी जा रही है। दीर्घ जीने वाला वृक्ष धीरे-धीरे बढ़ता है। नारियल के पेड़ में दस साल बाद फल लगते हैं। दूसरे कई पेड़ एक-दो साल में फलने लगते हैं और १०-१२ साल में समाप्त हो जाते हैं। नारियल १० साल बाद फलता है, तो १०० साल से भी ज्यादा जीता है। गांधीजी का असर अभी नहीं नापा जा सकता। १००-२०० साल के बाद पता चलेगा। सत्कार्य का असर सूक्ष्म होता है।

इस तमिलनाड की यात्रा में कुछ ऐसे सेवक पैदा हुए, यह सबसे बड़ी कमाई है। भगवान् उनकी निष्ठा निरंतर बढ़ाये। वह उन्हें पूर्ण आयु और शांति दे।
(मुलाकुमुड़, कन्याकुमारी, १७-४)

"इमं पश्यत" : 'इसे देखिये'

(लोचनदास मदन)

आजकल की समर-ज्वाला में दग्ध होने वाले संसार के लिए यदि कोई आशाजनक संदेश है, तो वह भूदान-यज्ञ ही है। आज के विज्ञान-युग में भूदान के संदेश का अर्थ है—संपूर्ण जीवन को आध्यात्मिक ध्येय की अभिव्यक्ति के योग्य बनाना। संचित निधि या संचित पुण्य के आधार पर तंत्र का जो चक्र घूमते रहता है, जाने-अनजाने हम उसीके अधीन हो जाते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि मौजूदा मनोदशा और विचार में परिवर्तन नहीं ला सकते।

ऋग्वेद कहता है: "(ऋतेन साधन्)-सीधे मार्ग से जाने पर सिद्धि देने वाला सच्चा मित्र (मानुषीषु विक्षु) मानवी प्रजाओं में, अर्थात् मनुष्य के हृदय और बुद्धि में ही निवास करता है। यही सच्चा मित्र (अपां गर्भः) सब कर्मों और संपूर्ण हलचलों का प्रेरक है और (मनीनां हव्यः) बुद्धियों का हवन करने वाला है।" (ऋ० ३।५।३)

आज भूदान-यज्ञ जनआधारित आंदोलन होने जा रहा है। यह बात स्पष्ट है कि जो निधि प्रत्येक को उपलब्ध है और हर एक व्यक्ति जिस निधि से सहायता प्राप्त कर सकता है; उस निधि का आश्रय लेने से ही जन-आधारित आंदोलन का स्वरूप अस्तित्व में आ सकता है। इसकी शुरुआत खुद से ही करनी है।

वास्तविक यज्ञ की ओर हमारी नजर रहे और बाह्य नक्शा ही अधिक प्रिय न हो जाय, इस दृष्टि से निधि-मुक्ति तथा तंत्र-मुक्ति के प्रस्ताव का वरदान के रूप में स्वागत करना चाहिए। उपनिषद् में वित्त और सर्व के तथ्य का बड़ा सुंदर वर्णन किया गया है। इस तथ्य से उक्त स्वीकृत प्रस्ताव और प्रस्तावक, दोनों के वास्तविक अर्थ का ज्ञान होता है।

> "न वा अरे वित्तस्य कामाय वित्तं प्रियं भवति, आत्मनस्तु कामाय वित्तं प्रियं भवति ॥
> न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति, आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति ॥"

—अर्थात् अरे, वित्त के लिए वित्त प्रिय नहीं होता है, परंतु आत्मा के लिए ही वित्त प्रिय होता है। सबके लिए ही सब प्रिय नहीं होता, परंतु आत्मा के लिए ही सब-कुछ प्रिय होता है।

भूदान-यज्ञ में जो यजमान अथवा यज्ञ-पुरुष है, उसकी ओर ही विनोबाजी ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है। इस यज्ञ-पुरुष की आराधना के लिए श्रद्धा और भक्ति का ही सहारा लेना पड़ेगा। गांधीजी के शब्दों में कहा जाय, तो "श्रद्धा का अर्थ है आत्मविश्वास और आत्मविश्वास का अर्थ है ईश्वर पर विश्वास।"

उपरोक्त मनोभूमिका के आधार पर निधि और तंत्र की परिभाषा ही बदल जाती है। विपुलता के क्षेत्र में जब भ्रमण होता है, तब संचित निधि की जगह करुणा-निधि का ही स्वरूप दृष्टिगोचर होता है और तंत्र का पर्यवसान स्वतंत्र की प्रतिभा में प्रकट होता है। दान की चर्चा करते हुए वेद कह रहा है: "भूखमरी दैवी आपत्ति या कर्म-विपाक नहीं है, बल्कि मनुष्यकृत समाज-व्यवस्था के दोषों का ही परिणाम है।" (ऋ० ११९) इसलिए श्री दादा धर्माधिकारी कहते हैं कि "भूदान-यज्ञ सामाजिक अर्थशुद्धि का आंदोलन है।"

श्री धीरेन्द्र भाई की भाषा में "श्रम-प्रतिष्ठा की आकांक्षा", जो हम सबकी आकांक्षा है, वह तथा उपरोक्त बातें तभी सिद्ध होंगी, जैसा कि वेद कहता है (इमं पश्यत, ऋ० ६।९।४)—"इसे देखिये।" याने किसको? सिर्फ बाह्य वस्तुओं को नहीं, बल्कि अंदर भी। (बहिषि ऋ० ५।११।२) प्रत्येक के हृदय में जिसका निवास है और प्रत्येक मनुष्य की सहायता करने के लिए जो सर्वत्र तत्पर है। (मनु + हितं)-"मनुष्य-मात्र का हित करने वाला," उसकी ओर देखता है। अपने अंदर इस प्रकार की दिव्य और अमर शक्ति है, जो (शुचय्यं) तेज उत्पन्न करती करती है तथा (ईरय्यं) उन्नति की प्रेरणा करती है। (ऋ० ४।२।१) इस प्रकार का विश्वास उत्पन्न होना चाहिए।

इसमें कोई शक नहीं कि भूमि का प्रश्न एक बुनियादी प्रश्न है, चूँकि भूमि ही सबका पोषण कर रही है। लेकिन इसके साथ यह भी भूलना नहीं चाहिए कि इससे भी बढ़कर जो मूक पुरुष, अर्थात् सच्चे पोषक का जो महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, भूमि-समस्या का सच्चा हल उस प्रश्न के समाधान में ही है। सिर्फ बाह्य दृष्टि से ही भूमि-समस्या को देखने के आदी रहेंगे, तो उसका अर्थ यही होगा कि मुर्दे में कितना भी पौष्टिक अन्न रखा जाय, तो भी उससे मुर्दा पुष्ट नहीं होगा, क्योंकि 'सच्चा-पोषक' वहाँ नहीं है। अतः हमें तो सच्चे पोषक की खोज करनी है। सन् '५७ की पृष्ठभूमि पर हमारा भ्रमण हो रहा है। अब 'जिंदा-दिल' की बात करनी है।

www.vinoba.in

स संन्यासी च योगी च !

(शिवाजी भावे)

[कालड़ी का सर्वोदय-सम्मेलन भूदान-यज्ञ के प्रवर्तक विनोबा की संकल्पित अवधि का विशेष महत्त्वपूर्ण सम्मेलन है। विनोबा का पिंड जिन निष्ठाओं का बना हुआ है, उसकी कुछ झाँकी उनके कनिष्ठ बंधु और सहधर्मी श्री शिवाजी भावे के इस लेख में मिलती है। इसलिए आज उसे यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। —सं०]

लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा, पुरा प्रोक्ता मयाऽनघ।
ज्ञानयोगेन सांख्यानां, कर्मयोगेन योगिनाम् ॥ (गीता ३-३)

कर्म का सिद्धान्त सार्वभौम माना गया है। कर्म को कोई टाल नहीं सकता (न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्)। फिर भी उस कर्म के आचरण को करते-करते, उसके भीतरी योग को सिद्ध करने वाला शायद 'लाखन में एक' मुश्किल से मिले और फिर उनमें भी असली संन्यासी का मिलना तो नितान्त विरल है।

संसार-रत मानव कर्म-चक्र के अगणित व्यवसायों में समस्त आयु, गले तक डूबा रहता है, परन्तु कर्म जैसे टलता नहीं वैसे टिकता भी नहीं, यानी उसका फल और परिणाम वैसा ही नश्वर है, जैसा वह कर्म। मानव से वह सदा के लिए चिपटा नहीं रहता। इसीलिए इस कर्म के आचरण में (कर्मयोगी) अनासक्ति को ढूँढ़ता है और उसीको हृदयङ्गम करने का यत्न करता है। यद्यपि यात्रा, मंजिल तक पहुँचने का साधन मात्र है, तथापि उस साधन को साध्य-सा मान कर उतनी ही लगन से उसका अनुशीलन करना एवं इष्ट-सिद्धि करना, यही कर्म-योग की और सब प्रकार के योग की विशेषता है।

इस तरह जो कर्मयोगी है, वह कर्ममात्र को अपनी जीवन-साधना का सोपान बना कर उसे बड़ी प्रतिष्ठा प्रदान करता है। क्षुद्र-से-क्षुद्र घटना, आयोजन अथवा व्यक्ति, जिस किसीके सम्पर्क में वह आता है, उसे वह अपनी जीवन-साधना का पहलू बना लेता है। इसीसे ऐसे (कर्मयोगी) व्यक्ति में लोकसंग्रह के प्रति झुकाव सदा बना रहता है।

संन्यास-वृत्ति वाला व्यक्ति इससे निराला है। हर एक कर्म में से अथवा उसके अमल या आचरण में से, हरएक प्रसंग, आयोजन या जो कोई बात उसके सामने आ जाती है, उसमें से वह केवल बुनियादी सिद्धान्त को ही निकाल लेता है। कार्य-कारण का विश्लेषण एवं पृथक्करण कर उसकी जड़ के सिद्धान्त को ही वह खोजता है। अंकगणित की उदाहरण-मालाओं को हल करने के बजाय उनके मूलभूत सिद्धान्त को ही पकड़ना उसे अधिक पसन्द है। उदाहरणों को हल करने में उसे दिलचस्पी नहीं। लेकिन कर्म-योगी का व्यवहार उलटा है। वह तो ऐसे उदाहरणों को ही संसार-व्यवहार के फलक पर एक के पीछे एक हल कर के दिखाने में मस्त रहता है।

संन्यासी लोक-संग्रह से न भागता है, न उसे खोजता है। वह तो स्वभाव से ही अतिव्यापक अर्थ से धर्म का प्रवर्तक है। वह केवल देश-कालाबाधित सार्वभौम सिद्धान्तों को ही प्रतिपादित किये जाता है। योगी सार्वभौम-साधना की राह दिखाता चला जाता है। गांधीजी गीता को 'अनासक्ति-योग' कहेंगे। सन्त विनोबा उसे 'समत्व-योग' कहेंगे, क्योंकि यह शब्द तत्त्व-सिद्धान्त को सूचित करने वाला है। समत्व साध्य है, अनासक्ति साधन है। संन्यासी सूर्य के समान है। सूर्य, नदी, पहाड़, मैदान अथवा बस्ती सर्वत्र जलती धूप और लू फेंकेगा, परन्तु किसीके घर के भीतर जाकर चूल्हे की हाँडी पकाना उसका काम नहीं। वह काम तो अग्नि का—योगी का—है। संन्यासी का वह काम नहीं।

संसार कर्म-रत है, परन्तु संसार-रत मानवों का कर्माचरण अनन्त कामनाओं से प्रेरित है—वे योगी नहीं। असंख्य व्यक्ति तो निरे जड़ता के मारे दिन-रात कर्म में उलझे रहते हैं। सच्चा योगी अथवा सच्चा संन्यासी दीर्घ काल में शायद ही कभी देखने में आता है।

फिर भी संसार में यह योगी-संन्यासी की जोड़ी युग-युगान्तर से हाथ में हाथ मिलाये, सदा साथ-ही-साथ चलती पायी गयी है। योगी के पीछे संन्यासी और संन्यासी के पीछे योगी, शृंखला की कड़ियों की तरह एक-दूसरे से जुड़े हुए ही दुनिया में चले आये हैं। याज्ञवल्क्य के पीछे जनक और जनक के पीछे शुकदेव, बुद्ध के पीछे शंकराचार्य। नामदेव-ज्ञानेश्वर, रामकृष्ण-विवेकानन्द, गांधी-विनोबा; इस भाँति यह युगल, सदा-सदा से चलते रहे हैं। अन्य देशों अथवा जातियों के इतिहास में भी यही दृष्टिगोचर होता है। संन्यासी रुपया है, तो योगी रेजगारी है। पूरा-का-पूरा बँधा रुपया और उसकी रेजगारी, दोनों की कीमत तो एक ही है, लेकिन रेजगारी रोजमर्रा के व्यवहार में अधिक उपयोगी है और बँधा रुपया धन-संग्रह की दृष्टि से अधिक आवश्यक है।

प्रवृत्ति और निवृत्ति के ये दो पूर्ण चित्र हैं। वृक्ष का पूर्ण रूप जैसे बीज में छिपा रहता है, वैसे ही संन्यास में कर्मयोग शक्ति-रूप से केन्द्रित रहता है। बीज जैसे वृक्ष में विस्तार पाता है, वैसे ही संन्यास साधन-रूप से कर्मयोग में फलता है। इस प्रकार संन्यासी और योगी देखने में भिन्न होने पर भी वस्तुतः अभिन्न हैं। सागर के वक्षःस्थल पर पहाड़ जैसी तरंगें क्यों न उछलें, उसकी जलराशि में एक बूंद की भी वृद्धि नहीं होती और जब वह शान्त झील के समान दीखता है, तब भी उसमें एक बूंद की कमी नहीं होती। केवल दृश्य ही बदलता है: 'एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति।'

इस पर भी योगी-संन्यासी का यह सनातन युग्म, संसार की दृष्टि में हम जिसे गुरु-शिष्य कहते हैं—वैसा ही हुबहू नहीं होता। हाँ, उसे हम पूज्य-पूजक कह सकते हैं। योगी चाहे लाख यत्न करे, फिर भी वह संन्यासी का रुख (ढंग) बदल न सकेगा। वैसे ही संन्यासी जो कुछ करे, वह कर्मयोगी को उसकी अपनी पद्धति, अपने तरीके, अपने कर्म-पथ से विचलित न कर सकेगा। वस्तुतः संन्यासी या कर्मयोगी को अपनी-अपनी पद्धति से विचलित करने की आवश्यकता भी नहीं। तबलची चाहे कितनी भी चालाकी करे, सच्चा गवैया कभी बेसुरा नहीं होता और निष्णात तबलची भी, गायक उसे अपने स्वर-सरकस में चाहे कितना उलझाये, अपनी ताल से कभी न चूकेगा। गुरु-शिष्य के नाते में हमारी परम्परागत स्वीकृत धारणा यह है कि शिष्य मानों कुम्हार के चाक पर की गीली मिट्टी-सा है। कुम्हार उसमें से कुंडा, गमला जो चाहे, बना ले। अथवा वह शिष्य कच्चा घड़ा है, जिसे कुम्हार ठोंक-पीट कर जैसा चाहे आकार देकर भट्ठी में पका ले। अथवा जैसे सुनार धातु को अग्नि में पिघला कर उसके रस को साँचे में ढाल कर अपनी अभीष्ट छड़ या प्रतिमा बना लेता है, वैसे ही गुरु-शिष्य का संबंध है। परन्तु योगी-संन्यासी वैसी उपादान-सामग्री नहीं। शुकदेव ने जनक को, विवेकानन्द ने रामकृष्ण को, संत विनोबा ने गांधीजी को गुरु माना, फिर भी दोनों के पिंड-खंड निराले हैं। इनके नाते में गुरु-शिष्य के बजाय पिता-पुत्र-भाव की कल्पना करना अधिक उपयुक्त होगा। पुत्र, पिता या माता के ठीक-ठीक समान कभी-कभी नहीं भी पाया जाता। इसके विपरीत गुरु-शिष्य के बारे में यह कहना अनुचित न होगा कि परिणाम में कभी-कभी दस आने-छह आने के भेद की संभावना भले ही हो, परन्तु दोनों की बुनाई काश्मीरी दोरुखे के समान उलट-सीध में एक-सी ही होती है। दोनों अभिन्न होते हैं।

वास्तव में पूर्ण अवस्था को पहुँचा हुआ कर्मयोग तथा वैसी ही पूर्णता को प्राप्त संन्यास, ये दोनों मानव के आन्तरिक विकास की एक-सी चरम अवस्थाएँ हैं। कली अपने आप खिल उठती है, वह किसी सहारे की मोहताज नहीं।

लेकिन असल में विनोबाजी की ऐसी स्वयंस्फूर्त संन्यास-भूमिका होने पर भी यह तो स्पष्ट है कि गांधीजी के हाथों अपार वात्सल्यपूर्वक उनका पितृवत् अभिवर्धन हुआ। जीवन के आरम्भ-काल में जन्म-दात्री माँ ने उनमें परमार्थ का सिंचन किया। फिर सन्तों की अजर-अमर अमृत-वाणी में वे सराबोर हो उठे और इसके बाद तो जो सन्त-वृन्द उनकी ध्यान-मूर्ति बना था, वह स्वयं ही मानो गांधीजी के रूप में उनके सामने आ उपस्थित हुआ। फिर तो कहना ही क्या था? सारी चिन्ता ही टल गयी। संसार-व्यवहार कैसे करना, किस प्रवृत्ति को उठाना, कुछ भी सोच-विचार का अब उन्हें प्रयोजन न रहा। स्वयं केवल ब्रह्म-चिन्तन में लीन रहे, कर्म-योग का भार बापू के सिर रहा।

इस तरह से संसार-व्यवहार का अनुभव विनोबाजी को गांधीजी से तैयार मिला। जन-सेवा का प्रतिपादन एवं विधि बनी-बनायी इन्हें मिल गयी। तिस पर भी गांधीजी के विविध राजकीय आन्दोलनों आदि में प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित होने का अवसर विनोबाजी के लिए दीर्घकाल पर्यन्त न आया। गांधीजी से दूर रहते हुए ही निरन्तर ब्रह्म-विचार की अखण्डता का विकास होता रहा। दूसरा भी एक लाभ इसमें से यह निष्पन्न हुआ कि गांधी-सिद्धान्त की कसौटी पर कसने तथा गांधीजी

www.vinoba.in

के कर्म-योग एवं अनुभवों में से निकले हुए रत्नों की परख करने का 'थर्मामीटर' या 'टेस्ट-ट्यूब' इनके पास तैयार हुआ। थर्मामीटर ज्वर का नाप ठीक-ठीक बतला देता है, क्योंकि वह स्वयं ज्वर से अलिप्त है। वैसे ही जो संन्यासी है, वह किसी भी तत्त्व-सिद्धान्त का सच्चा नाप-तौल बतला सकता है; क्योंकि वह कर्म के ज्वर एवं अभिनिवेश से अलिप्त है।

बापू भी इस स्थिति को ताड़ चुके थे—वरना किसी एक अवसर पर विनोबाजी की अवस्था को वह "जड़ भरत" की उपमा कैसे देते? केवल एक संन्यासी ही की अवस्था वैसी होती है। सन्त ज्ञानेश्वर ने कहा—"तेणें न पाहतां विश्व देखिलें। न करितां सर्व केलें। न भोगतां भोगिलें। भोग्यजात। एके ठायीं बैसला। परि सर्वत्र तोचि गेला। हें असो विश्व जाहला। आंगें चि तो।" उसने बिना देखे ही सारा विश्व देख लिया। बिना किये सकल कर्म कर लिये। बिना भोगे, समस्त भोग भोग लिये। एक जगह बैठे हुए वह सर्वत्र घूम आया। अधिक क्या? वह सब कुछ स्वयं ही हो गया।

संन्यासी की अवस्था ऐसी होती है। बाह्य दौड़-धूप करता हुआ तो वह नहीं दीखता, फिर भी उसके द्वारा संसार को सत्कर्म की अनन्त प्रेरणा निरन्तर मिलती ही रहती है।

(मूल मराठी, अनुवादिका—श्रीमती शान्ता कोल्हड)

समाज और भूमि-व्यवस्था : १.

(टॉलस्टॉय)

समाज-संगठन-संबंधी कुछ योजनाओं में, जो साम्यवादी मानी जाती हैं, जमीन सार्वजनिक संपत्ति मान कर सम्मिलित रूप से उसे जोतते-बोते हैं। लेकिन दूसरी कुछ ऐसी योजनाएँ भी हैं, जिनका विचार हमें करना चाहिए!

(१) विलियम ओगिलवी आठवीं शताब्दी के स्कॉटलैंडवासी सज्जन पुरुष थे। वे मानते थे कि "चूँकि प्रत्येक मनुष्य जमीन पर पैदा होता है, इसलिए उस जमीन पर रहने और उसकी पैदावार से अपना भरण-पोषण करने का उसे पूर्ण अधिकार है। इसलिए थोड़े से मनुष्य इस जमीन को अपनी व्यक्तिगत संपत्ति बना कर उसके इस अधिकार में किसी प्रकार की कोई बाधा उपस्थित नहीं कर सकते। प्रत्येक मनुष्य को उतनी ही जमीन अपने कब्जे में रखने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए, जो उसके हिस्से की है।"

(२) इसके कुछ वर्ष बाद ब्रिटेननिवासी एक दूसरे सज्जन ने जमीन-संबंधी इस समस्या का इस प्रकार हल सुझाया: "सारी जमीन जिलों की जनसंख्या में सामूहिक रीति से बाँट दी जाय। जिस प्रकार जिले की जनता चाहे, उसका उपयोग कर सकती है।" इस प्रकार अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा भूमि को अपनी वैयक्तिक संपत्ति बनाने की प्रथा का बिलकुल अंत ही कर दिया गया था।

(३) महाशय स्पेन्स ने भी इसी संबंध में अपने विचार एक प्रसंग पर, सन् १७८८ में प्रगट किये थे। प्रसंग यों है:

"एक दिन मैं अकेला जंगल में अखरोट बीन रहा था कि एकाएक उस जंगल के अफसर ने झाड़ी के बीच से मेरी ओर झाँक कर पूछा—"तुम यहाँ क्या कर रहे हो?" मैंने उत्तर दिया, "अखरोट बीन रहा हूँ।"

उसने कहा—"क्या अखरोट बीन रहे हो? यह कहने का साहस तुम्हें कैसे हुआ?"

मैंने कहा—"बताओ कि क्यों न हो? अगर कोई गिलहरी या बंदर ऐसा करता होता, तो क्या उससे भी ऐसा ही प्रश्न आप करते? क्या आप मुझे इन जानवरों से भी बदतर समझते हैं? या मेरा अधिकार इनसे भी कम है?" फिर जरा कड़क कर पूछा—"आखिर तुम होते कौन हो, जो मेरे काम में इस तरह बाधा पहुँचा रहे हो?"

उसने कहा—"मैं यह सब तुम्हें उस समय बता दूँगा, जब मैं तुम्हें यहाँ अनधिकार प्रवेश करने के अपराध में गिरफ्तार कर लूँगा।"

मैंने उत्तर दिया—"बेशक, लेकिन जरा यह तो बताइये कि यहाँ, जहाँ कि कभी किसी मनुष्य ने न पेड़ लगाये, न जमीन जोती-बोयी, मेरा अपना अनधिकार प्रवेश कैसे कहा जा सकता है? ये अखरोट तो प्रकृति देवी ने अपनी इच्छा से लोगों को भेंट किये हैं। वे तो सर्व-साधारण की संपत्ति हैं।"

उसने कहा—"मैं तुमसे यह कहता हूँ कि यह जंगल सर्वसाधारण की संपत्ति नहीं है। इसके मालिक पोर्टलैंड के ड्यूक हैं।"

मैंने कहा—"बड़ी अच्छी बात है। ड्यूक साहब जुग-जुग जीयें। पर प्रकृति उन्हें भी उतना ही जानती है, जितना कि मुझे और प्रकृति देवी के भंडार में तो यह नियम है कि पहले आओ और पहले खाओ। इसलिए अगर साहब कुछ अखरोट लेना चाहें, तो शीघ्रता करें।"

अंत में महाशय स्पेन्स ने गरज कर कहा कि "अगर मुझे ऐसे देश की रक्षा करने का हुक्म दिया जाय कि जिसमें एक अखरोट भी नहीं तोड़ा जा सकता, तो मैं यह कह कर अपने हथियार फेंक दूँगा कि इसके लिए पोर्टलैंड के ड्यूक जैसे व्यक्तियों को ही लड़ने दो, जो कि देश के मालिक होने का दावा करते हैं।

(४) इसी प्रकार "विवेक-युग" ("The age of Reason") और "मनुष्य के अधिकार" ("The rights of man") नामक ग्रंथों के प्रसिद्ध लेखक टॉमस पेन ने भी इस समस्या का हल पेश किया। उनके हल की विशेषता यह थी कि भूमि को उन्होंने सार्वजनिक संपत्ति माना और भिन्न-भिन्न जमींदारों द्वारा भूमि पर स्थापित अधिकार को नष्ट करने के लिए उत्तराधिकार की प्रथा को मिटा देने का प्रस्ताव भी किया, ताकि जो जमीन अब तक किसी एक व्यक्ति की ही संपत्ति रही, उसके मालिक के मर जाने पर सार्वजनिक संपत्ति हो जाय।

(५) टॉमस पेन के बाद गत शताब्दी में पैट्रिक एडवर्ड डव ने इस विषय में बहुत कुछ विचार किया और लिखा है। मि० डव का सिद्धांत यह था कि "जमीन का मूल्य दो प्रकार से बढ़ता है: स्वयं जमीन की उर्वरा शक्ति से और दूसरे, उस पर किये गये परिश्रम से। जमीन का जो कुछ भी मूल्य उस पर किये गये परिश्रम के कारण बढ़ जाता है, वह किसी मनुष्य की व्यक्तिगत संपत्ति हो सकती है। पर अपनी उर्वरा शक्ति के कारण जो कुछ भी मूल्य होता है, वह तो समस्त राष्ट्र की संपत्ति है, जैसे कि हो रहा है। वह कभी किसीकी व्यक्तिगत संपत्ति नहीं होनी चाहिए।"

(६) जापान की 'लैण्ड-रिक्लेमिंग सोसाइटी' ने भी ऐसी ही एक योजना तैयार की है। योजना संक्षेप में यों है: "प्रत्येक को अपने हिस्से की जमीन पर, इस शर्त पर बने रहने का अधिकार है कि वह उसके लिए एक निश्चित कर (टैक्स) दिया करे और इसलिए जिस व्यक्ति के पास अपने हिस्से से ज्यादा जमीन है, उससे वह अपने हिस्से की जमीन माँग सकता है।"

परंतु मेरी राय में तो सबसे अधिक न्याय्य और व्यवहार्य योजना हेनरी जॉर्ज की है, जो "सिंगल टैक्स सिस्टम" के नाम से प्रसिद्ध है। हेनरी जार्ज की तैयार की गयी योजना मुझे तो सबसे अधिक न्याययुक्त, लाभप्रद और सबसे अधिक व्यवहार्य दिखायी देती है। संक्षेप में उसका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है।

(७) "मान लीजिये कि किसी स्थान में सारी जमीन के मालिक दो जमींदार हैं। इनमें से एक बहुत धनवान और दूर देश में रहने वाला है और दूसरा धनवान तो नहीं है, पर अपनी जमीन आप जोतता है। लगभग सौ किसान और हैं, जिनके पास थोड़ी जमीन है। इसके अतिरिक्त, इसी स्थान में ऐसे बहुत से मजदूर-पेशा आदमी, शिल्पकार, सौदागर और सरकारी कर्मचारी रहते हैं, जिनके पास कोई जमीन नहीं है। मान लीजिये कि इस स्थान के सब निवासी इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि कुल जमीन सार्वजनिक संपत्ति है। तब वे इस विश्वास के अनुसार उस जमीन का बँटवारा कैसे करें?

"सभी ऐसे लोगों से, जिनके पास जमीन है, उस कुल जमीन को ले लेना और प्रत्येक मनुष्य को अपनी रुचि के अनुसार जमीन का उपभोग करने की इजाजत दे देना तो असंभव है, क्योंकि एक ही किस्म की जमीन के लिए बहुत से उम्मीदवार खड़े हो जायेंगे और उनमें ऐसे झगड़े पैदा हो जायेंगे कि फिर उनका कभी अंत ही न हो। सबके लिए सम्मिलित होकर जमीन का जोतना, बोना, निराना, फसल काटना और तैयार करना तथा बाद में उसका आपस में बाँट लेना भी व्यवहार्य न होगा, क्योंकि कुछ लोगों के पास तो हल, बैल और गाड़ियाँ हैं, दूसरे के पास नहीं हैं। इसके अलावा कुछ लोगों को जमीन जोतने, बोने का न तो काफी अनुभव है और न खेती का आवश्यक ज्ञान ही। जनसंख्या के अनुसार एक प्रकार की जमीन को बराबर-बराबर हिस्सों में बाँटना भी बहुत कठिन होगा। यदि प्रत्येक किस्म की जमीन बहुत से छोटे-छोटे हिस्सों में बाँट ली जाय, जिससे कि प्रत्येक मनुष्य को जोतने, बोने और जंगल आदि के लिए उत्तम, मध्यम एवं निकृष्ट-सभी प्रकार की जमीन का अलग-अलग हिस्सा मिल जाय, तो आवश्यकता से अधिक बहुत से छोटे-छोटे हिस्से बढ़ जायेंगे।" (क्रमशः)

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ
३ मअी सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

वीरोधों का समन्वय ही सर्वोदय !

(वीनोबा)

धर्मवाले समझते हैं की कम्युनीस्ट हमारे परम वैरी हैं और कम्युनीस्ट समझते हैं की धर्मवाले हमारे नंबर अेक के दुश्मन हैं। अीस तरह दो बाजू दो पक्ष सज्ज होकर खड़े हो गये। हम सर्वोदयवादी क्या कहते हैं ? अरे भाअी, तुम Leftist (वाम-पंथी) हो और वे Rightist (दक्षीण-पंथी) हैं। मुझे भी तो अेक दाहीना हाथ है और अेक बायां हाथ है। मैं दोनों हाथों से काम करता हूं, तो झगड़ा कहां आता है ? सारा धर्म-पंथ अेक बाजू। वह व्यक्ती की हृदय-शुद्धी की बात करता है। दूसरी बाजू में जो लोग हैं, वे समाज-व्यवस्था की ही बात सोचते हैं। यहां व्यक्ती की परवाह नहीं है। अुनकी दृष्टी में व्यक्ती है— छोटे-छोटे बाल ! बढ़ गये, तो हजामत कर ली ! क्या महत्व है अुसका ? व्यक्ती तो आते हैं और जाते हैं। महत्व है समाज का।

अीस तरह व्यक्ती की महीमा शून्य और समाज की परीपूर्ण महीमा मानने वाला अेक पक्ष और समाज की महीमा शून्य और व्यक्ती का ज्यादा महत्व मानने वाला दूसरा पक्ष। अीस तरह दोनों के बीच लड़ाअी होती है। हम समझाते हैं की तुम लड़ाअी मत करो। हम 'कॉमन प्लॅटफॉर्म' बनाते हैं। आप हमारे दाहीने-बायें बैठीये। हम समाज की पुनर्-रचना भी चाहते हैं और साथ-साथ यह भी चाहते हैं की व्यक्ती की हृदय-शुद्धी नहीं होगी, तो अच्छी व्यवस्था होने पर भी वह व्यवस्था बीगड़ जायेगी। अीसवास्ते दोनों योजनाअें साथ-साथ होनी चाहीअे। यह है सर्वोदय की फीलॉसफी (दर्शन)। लेकीन कोशीश दोनों ओर ठीक ढंग से करनी होगी, नहीं तो दोनों तरफ से मार मीलेगी। अेक कहेगा की अरे, यह तो कम्युनीस्टों के साथ बैठता है और दूसरा कहेगा की अरे, यह तो अुनके साथ भगवान् की प्रार्थना में भी जाता है। अीस तरह मृदंग को जैसे दोनों तरफ से थप्पड़ मीलते रहते हैं, अुसी तरह हमारी हालत होगी। लेकीन हम जान-बूझ कर यह मध्यस्थ भूमीका मान्य करते हैं और दोनों बाजू की मार खाने की तैयारी रखते हैं। परीणाम यह हुआ है की दोनों तरफ से हमको आशीर्वाद मील रहा है।

(नेयाट्टीनकरा, त्रीवेंद्रम, १९-४)

* लिपि-संकेत : ि = ी ; ी = ी ; ख = ख ; संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से।

सर्वोदय की दृष्टि से :

शतंजीवी महर्षि धोंडो केशव कर्वे

महारथी कर्ण ने जन्मगत अपात्रता के विरोध में अपनी आवाज उठा कर पुरुषार्थवानों के पुरुषार्थ को प्रेरित करने वाले अविस्मरणीय शब्दों में कहा था, "किसी कुल में जन्म होना तो दैवाधीन था, लेकिन पुरुषार्थ करना मेरे अपने हाथ की बात है।" जन्मगत अपात्रता का सबसे बड़ा और सबसे अधिक खेद-कारक उदाहरण है—स्त्री की सामाजिक और कौटुंबिक भूमिका। वह जन्म से ही अपवित्र, असहाय और अविश्वसनीय मानी गयी है। केवल शेक्सपीयर के हॅमलेट ने ही नहीं कहा, "चंचलते और दुर्बलते, तेरा नाम स्त्री है," वाल्मीकि के दशरथ ने भी कहा, "अनित्यहृदया हिताः" ("वे चंचल चित्त की होती हैं !") इसीलिए शिक्षण और स्वतंत्रता उनके लिए खतरे की चीजें मानी गयीं; क्योंकि उससे उनकी चंचलता और कपटपटुता और भी बढ़ेगी। 'स्त्रियश्चरित्रं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः।' ("स्त्री का चरित्र ईश्वर तक नहीं जानता, मनुष्य की कौन कहे !") कुछ ऐसी धारणा हो गयी कि स्त्रीत्व स्त्री का असाध्य रोग है—जिसके साथ वह पैदा होती है।

इन सामाजिक मान्यताओं को बदलने में अपने अविरत कर्मयोग, सतत तपाचरण और अदम्य निष्ठा से जिस प्रातःस्मरणीय विभूति ने दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष सफलता पायी, उन महर्षि धोंडो केशव कर्वे ने ता० १८ अप्रैल '५७ को अपनी आयु के सौवें वर्ष में पदार्पण किया। भारत माता की प्रतिनिधिभूत असंख्य स्त्रियों के अन्तस्तल से इस मातृवत्सल पुरुषश्रेष्ठ के लिए 'चिरं जीव' का आशीर्वाद निकला होगा। महर्षि धोंडोपंत (अण्णासाहब) कर्वे को उस आशीर्वाद ने केवल आयुष्मान् ही नहीं, आरोग्यसंपन्न भी बनाया। इस शतायु पुरुष की इन्द्रियाँ और अवयव आज भी स्वस्थ एवं कार्यक्षम हैं। उनकी बुद्धि मंद या क्षीण नहीं हुई है। उन्हें आसक्ति किसी विषय में नहीं है, परन्तु उनकी अभिरुचि और जीवन के प्रति उनकी आस्था किसी तरह कम नहीं हुई है। अण्णासाहब कर्वे की जीवनी एकनिष्ठता, अध्यवसाय और प्रामाणिकता का एक महाकाव्य है। मराठी में उनकी लिखी हुई 'आत्मकथा', जिसे उन्होंने 'आत्मवृत्त' नाम दिया है, सरल-सुबोध और प्रत्ययोत्पादक सजीव वाङ्मय का एक अनुपम उदाहरण है।

महर्षि कर्वे ने जब स्त्री-शिक्षण का उपक्रम किया, उस वक्त इस देश पर जापान के अभ्युदय का गहरा प्रभाव था। जापान की मिसाल पर उन्होंने स्त्री-शिक्षण के तीन प्रधान उद्देश्य बतलाये—(१) "स्त्री को स्त्री के नाते शिक्षण देना, (२) स्त्री को नागरिक के नाते शिक्षण देना और (३) स्त्री को मनुष्य के नाते शिक्षा देना।" स्त्री को मनुष्य बनाने में उन्हें जो अल्प सफलता मिली, वह भी दूसरे किसी समाज-सुधारक को उस अनुपात में और उस मात्रा में नहीं मिली। फिर भी जिस स्त्री को वेदों का अधिकार नहीं था, उसको उन्होंने 'गृहीतागमा' (गृहीत + आगमा) बनाया। आज उनके महिला-विद्यापीठ से हजारों विदुषियाँ 'गृहीतागमा' बन कर बाहर निकली हैं। स्त्री-शिक्षण और स्त्रियों की उन्नति के लिए महर्षि अण्णासाहब कर्वे ने मानों इस युग का सबसे पवित्र और सबसे अधिक समाज-परिवर्तनकारी धर्मानुष्ठान किया है।

१८५७ से १९५७ तक एक पूरा शतक उन्होंने देख लिया है। उनके लिए हमारी प्रार्थना केवल 'शतं जीयात्' नहीं है, बल्कि 'भूयाश्च शरदः शतात्' है।

दिलदारनगर, २५-४-'५७ —दादा धर्माधिकारी

कम्युनिज्म : एक नयी मोड़ पर

विनोबा ने और "भूदान-यज्ञ" ने केरल की नयी सरकार के लिए सुयश-कामना की, तो बहुत लोगों को बड़ा अचरज हुआ। उनमें से कुछ व्यक्तियों ने मुँह-जबानी और पत्र लिख कर हमसे पूछा कि सर्वोदय को मानने वाले कम्युनिस्टों के लिए शुभकामना कैसे प्रकट कर सकते हैं ! जहाँ तक साधन-शुद्धि का सवाल है, कम्युनिस्टों में और सर्वोदय-निष्ठ लोगों में दो ध्रुवों का अन्तर है।

हमारी समस्या कोई वाद नहीं

सुनने में यह आक्षेप बहुत उपयुक्त मालूम होता है, परंतु उसके मूल में एक भ्रांतिपूर्ण धारणा है। हम यह भूल जाते हैं कि सर्वोदय ने कम्युनिज्म को कभी अपनी समस्या नहीं माना। समस्या तो आर्थिक विषमता, जातीयता और सांप्रदायिकता की है। 'सोवियतिज्म,' 'माओइज्म,' 'तितोइज्म' या 'अमेरिकेनिज्म'

www.vinoba.in

हमारी समस्या नहीं है। समस्याओं को हल करने के ये अलग-अलग तरीके हैं। लोकसत्ता और विचार-स्वातंत्र्य पाश्चात्य लोकतंत्रवाद की विशेषताएँ हैं। व्यक्तिगत स्वामित्व और संपत्ति का, उनके अंतिम निराकरण की दृष्टि से, नियंत्रण और समाजीकरण रूस और चीन के साम्यवाद की विशेषता है। सन् १७७७ में अमेरिका ने स्वतंत्रता के जिन सिद्धांतों की घोषणा की उनका समन्वय समाजवादी क्रांति के साथ करना इस युग का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण क्रांतिकारी प्रयोग माना जाना चाहिए। इसलिए क्रांति की प्रक्रिया में हमारा प्रतिपक्षी न तो कम्युनिज्म है, न पाश्चात्य लोकतंत्रवाद है—हमारे प्रतिपक्षी सत्तावाद, संपत्तिवाद, शस्त्रवाद और राजनैतिक मिथ्यावाद हैं।

दो अनूठे नमूने

मार्क्सवाद का एक आधारभूत तत्त्व यह है कि मनुष्य को वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। वे यह भी मानते हैं कि वस्तुस्थिति के कारण मनुष्य भला या बुरा बनता है। ता० १४ अप्रैल '५७के 'टाइम्स ऑफ इंडिया इलस्ट्रेटेड विकली' में कम्युनिस्ट नेता श्रीपादराव डांगे का एक रंगीन चित्र और शब्द-चित्र निकला है। उसके अंतिम परिच्छेद में दो बड़ी दिलचस्प बातें आयी हैं। श्री डांगे ने किसी अवसर पर कहा, "हमारा विश्वास एक ऐसे समाज के निर्माण में है, जिसमें शोहदे और बदमाश भी भले आदमियों की तरह पेश आयेंगे। आखिर शोहदे और बदमाशों के अस्तित्व के लिए सामाजिक परिस्थिति ही जिम्मेवार है।"

उसी परिच्छेद में दूसरे एक प्रसंग का उल्लेख है। आगे आने वाले अद्भुत आदर्श समाज के विषय में किसी परिषद के मंच से बड़े ओजस्वी भाषण हो रहे थे। इतने में श्री एँड्रि मार्लो ने सवाल पूछा, "लेकिन आप इस आदमी का क्या प्रबंध करेंगे, जो ट्रामगाड़ी के नीचे कुचला गया हो?" तुरंत जवाब मिला, "आदर्श समाजवादी यातायात-व्यवस्था में दुर्घटनाओं के लिए कोई गुंजाइश नहीं रहेगी।"

साधनों की योजकता

सर्वोदय के विषय में जो लोग यह कहते हैं कि वह केवल स्वप्न-रंजन है, व्यवहार विमुख आदर्शवाद है, उनके उद्बोधन के लिए ये दो नमूने काफी हैं। इस सबका मतलब यह है कि आदर्शों में कोई मूलभूत अंतर नहीं है। साधनों की योजना में भी व्यावहारिक परिस्थिति और ध्येयनिष्ठा, दोनों को दृष्टि के सामने रख कर निर्णय करना होता है। हमें जिस परिस्थिति का मुकाबला करना होता है, उस परिस्थिति के परंपरागत साधनों को यदि क्रांतिकारी अपना लेता है, तो उसमें और स्थितिवादियों में कोई विशेष अंतर नहीं रह जाता। क्रांतिकारी के साधन वस्तुनिष्ठ होते हुए भी प्रगतिशील होने चाहिए और 'प्रगतिशील' का अर्थ है—'मनुष्य की सांस्कृतिक भूमिका के अनुरूप।' इस दृष्टि से आज हम यह देखते हैं कि वस्तुनिष्ठ मनोवृत्ति के कारण ही कम्युनिस्ट क्रांतिवादियों के साधनों में प्रगतिशील परिवर्तन हो रहा है।

श्री अजय घोष का वक्तव्य

ता० २० अप्रैल के 'हिंदुस्तान टाइम्स' में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महामंत्री श्री अजय घोष का एक वक्तव्य छपा है, जो उन्होंने ता० १९ अप्रैल को हैदराबाद में दिया था। श्री अजय घोष ने यह कहा है—"हमारा पक्ष शांतिमय और लोकतांत्रिक उपायों से समाजवाद की स्थापना करना चाहता है। यह केवल मेरा अपना कथन नहीं है। हमारे पक्ष की यह आधारभूत नीति और कार्य-प्रणाली है।" आगे चल कर उन्होंने कहा "श्री सुंदरय्या और श्री रणदिवे के नाम पर अखबारों में यह बात निकली है कि यदि हमारी सरकार को अच्छी तरह काम करने नहीं दिया जायगा, तो हमारी पार्टी हिंसा का रास्ता लेगी।" श्री अजय घोष ने कहा कि "श्री सुंदरय्या ने तो इस समाचार का खंडन किया है और मुझे विश्वास है कि श्री रणदिवे इस तरह की कोई बात हरगिज नहीं कहेंगे।"

श्री अजय घोष ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा—"देश की नयी परिस्थिति में सशस्त्र संग्राम की बात करना थोथी बकवास है। कम्युनिस्ट पार्टी या उसका कोई जिम्मेवार सदस्य आज हिंसक उपायों की योजना का विचार भी नहीं कर सकता।"

कम्युनिस्टों के प्रति अविश्वास

कुछ लोगों को कम्युनिस्टों की किसी बात पर विश्वास ही नहीं होता। वे कहते हैं, "चकमा ही कम्युनिस्टों का सत्य है और दाँव-पेंच ही उनकी सदाचार-नीति है! इसलिए जब उनका मतलब जिस तरह की बात कहने से सधता हो, उस तरह की बात वे बेधड़क कह देते हैं। उनके धर्म में कोई धर्म-सिंधु और निर्णय-सिंधु नहीं है, केवल मतलब-सिंधु और अवसरसाधुत्व है।"

वर्तमान अवसर की आवश्यकता

इस आक्षेप के पीछे वस्तुस्थिति की अनभिज्ञता और आत्मप्रत्यय का अभाव है। आज संसार की वस्तुस्थिति यह है कि शस्त्र में क्रान्ति का उपकरण बनने की पात्रता नहीं रह गयी है। शस्त्र अब सांस्कृतिक उन्नति का साधन नहीं है, आसुरी विध्वंस का उपकरण है। वस्तुनिष्ठा को अपना परम धर्म मानने वाले कम्युनिस्ट प्रत्यक्ष परिस्थिति की तरफ से आँखें बंद नहीं कर सकते। निःशस्त्रीकरण वर्तमान अवसर की आवश्यकता है।

'आइक' और बुलगानीन

कल के अखबार में अमेरिका के अध्यक्ष 'आइक' का जो वक्तव्य निकला है, उसमें वे कहते हैं कि निःशस्त्रीकरण केवल संभवनीय और वांछनीय ही नहीं, अपितु अनिवार्य है।" दूसरी तरफ से रूस के प्रधान मंत्री मार्शल निकोलाय बुल्गानीन ब्रिटिश प्रधान मंत्री मेक्मिलन को सुझाव देते हैं कि "पहले कदम के तौर पर एक निश्चित अवधि के लिए तत्काल अणु और उदजन-आयुधों पर प्रतिबंध लगा दिया जाय।" आंतर्राष्ट्रीय और जागतिक परिस्थिति की यह अनिवार्य आवश्यकता श्री अजय घोष तथा श्री शंकरन् नंबुद्रिपाद के वक्तव्यों में प्रतिबिंबित हुई है।

कम्युनिस्ट नेताओं की जिम्मेवारी

संसार में और इस देश में कम्युनिस्ट पार्टी की एक विशिष्ट परंपरा और इतिहास रहा है। उनके विषय में यह धारणा बद्धमूल हो गयी है कि उपाययोजना के विषय में वे किसी प्रकार का विधिनिषेध नहीं मानते। उन्हें किसी तरीके या तरकीब से पथ्य-परहेज नहीं है, इसलिए लोग उनके वक्तव्यों और घोषणाओं का भरोसा नहीं कर पाते। लोग कहते हैं कि इनके सूत्रों का छोटा भाई नारा है, जो कभी-कभी बड़े भाई की गद्दी छीन लेता है! इसलिए नारा कब मंत्र-वाक्य बन जायगा, इसका कोई ठिकाना नहीं! ठीक यही बीमारी आज आंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र को हलाहल से विषाक्त कर रही है। राजनीतिज्ञ केवल औपचारिक सत्य का ही प्रयोग करते हैं। उनकी कोई घोषणा पारमार्थिक नहीं मानी जाती। श्री अजय घोष और श्री शंकरन् नंबुद्रिपाद जैसे जिम्मेवार पदाधिकारियों से हमारा सानुरोध निवेदन है कि वे अपने आचरण और व्यवहार से इस प्रचलित लोकभ्रम का निराकरण करें। तब लोगों में यह विश्वास पैदा होगा कि शांतिमय उपायों की योजना सिर्फ एक नया हथकंडा और पैंतरा नहीं है, बल्कि क्रांति की गतिविधि में एक नयी मोड़ का द्योतक है।

कम्युनिज्म और नागरिक स्वतंत्रता

कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में दूसरा एक लोकभ्रम उतना ही जबरदस्त है। लोग यह मानते हैं कि एक बार इनके हाथ में पूरी हुकूमत आ जाने पर ये विचार-स्वतंत्रता का गला घोंट देंगे। कर्म-स्वातंत्र्य को अतीत का इतिहास बना देंगे और दूसरी किसी पार्टी को मंद साँस भी नहीं लेने देंगे। इस भय का निवारण करना भी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेताओं का पवित्र कर्तव्य है। लोकनिष्ठ क्रांतितंत्र का यह परम तत्त्व है। यह कहने से काम नहीं चलेगा कि कम्युनिस्ट पार्टी को संविधानात्मक तथा शांतिमय उपायों का प्रयोग करने के लिए सुयोग देना केवल दूसरे पक्षों की जिम्मेवारी है। आज की परिस्थिति में शांति क्रांतितंत्र का एक अविभाज्य आयाम है। इसलिए शांतिमय तथा संविधानात्मक उपायों का प्रयोग क्रांतिवादियों की निष्ठा का प्रकट चिह्न, उनका बाना और बिरद होना चाहिए।

काशी, २६-४-'५७ —दादा धर्माधिकारी

'आइक' का दृढ़ विश्वास

आगस्ता (जार्जिया) में २३ अप्रैल को अमेरिका के अध्यक्ष आइसन हावर ने कहा कि अमेरिका की सरकार का यह दृढ़ विश्वास है कि शस्त्रास्त्रों का नियंत्रण न केवल संभवनीय और वांछनीय ही है, बल्कि अन्ततोगत्वा अनिवार्य भी है। ('हिंदुस्तान टाइम्स' से)

www.vinoba.in

कन्याकुमारी के श्रीचरणों में–

(महादेवी)

कन्याकुमारी के साथ भारतीयों की कितनी ही पावन भावनाएँ जुड़ी हुई हैं। कविवर रवीन्द्रनाथ ने इसी स्थान को लेकर वर्णन किया है : "नील सिन्धुजल धौत चरण-तल।" भारत माता के चरण, तीन सिंधुओं का संगम, इसके सिवाय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के रक्षा-विसर्जन का एक स्मारक भी यहाँ बना है। वह भी यहाँ की पवित्रता में वृद्धि करता है और हृदय को शुद्ध करता है।

ऐसे पवित्र स्थान में ध्यान-चिन्तन के लिए दो दिन ठहरने का विनोबाजी ने सोचा था। उसके अनुसार पूज्य बाबा ता० १४ अप्रैल, पूर्णिमा के दिन १२ मील चल कर सुबह साढ़े आठ बजे कन्याकुमारी पहुँचे। सागर के किनारे ही बाबा का निवास था। बाबा का "राम" और जलनिधि का "ओम्", इन दो दिनों में कर्ण-रंध्रों में घोष करता रहा!

पहले दिन दोपहर ४ बजे बाबा सागर-दर्शनार्थ गये। कुछ ध्यान-चिन्तन किया। दूसरे दिन प्रातःकालीन वेला में करीब ६ बजे घूमते हुए बाबा सागर-संगम के किनारे आये, तीनों समुद्र हिलोरे ले रहे थे, मानो अचेतन को भी सचेतन कर रहे हों। सागरों का निनाद सबको संदेश दे रहा था कि संकल्प करो, पुरुषार्थी बनो। सामने ही पानी में थोड़ी दूर विवेकानंद-शिला है। बाबा ने कहा, "इस टेकड़ी पर स्वामी विवेकानंद ध्यान-चिन्तन करते थे। यहाँ से प्रेरणा-स्फूर्ति लेकर वे अमेरिका गये और भारत की आत्मज्ञान की ज्योति को संसार में फैलाया।"

बाबा समुद्र के तीर पर पानी के अंदर शिलासन पर बैठने गये, पत्थरों पर काई जमी थी। अतः पैर फिसल कर एक-दो व्यक्ति नतमस्तक भी हुए। शिलासन क्या था, शिला के नुकीले सिरों के कारण पाषाण-शरासन था। उस पर बैठ गये। विशाल सागर और नभोमंडल के क्षितिज पर भगवान् अंशुमाली अपनी लालिमा को पार कर द्रुत गति से ऊपर चढ़ रहे थे। समुद्र की लहरों का घोष चल रहा था। धीरे-धीरे लहरों ने बाबा के चरणों को स्पर्श किया। भावना-गंगा उछलने लगी। भाव-बिन्दु और जल-सिन्धु का संगम हुआ। दूसरे ही क्षण एक बड़ी लहर आयी और बाबा को आपादमस्तक स्पर्श करके मानो आशीर्वाद दिया। बाबा ध्यानमग्न थे, थोड़ी देर के बाद भाव-गंभीर वाणी से बोले :

> "आज कन्याकुमारी के चरणों में, हिन्द महासागर के किनारे और सूर्य भगवान् की उपस्थिति में हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि जब तक भारत में ग्रामराज्य की स्थापना नहीं होगी, तब तक हम उसीके लिए घूमते हुए प्रयत्न जारी रखेंगे। उसकी सिद्धि के लिए हम भगवान् से बल-प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं।"

महासंकल्प करके बाबा वापस आ रहे थे। करीब पौने सात का समय था। वहीं तट पर एक जवान भूमिपुत्र सोया पड़ा था। यह देख कर बाबा बोले "यह अच्छा कार्यक्रम है।" आगे कहा : "सागर मैय्या जागृत है, तुम सुखनिद्रा में सोओ। माँ जागृत रहती है, तो बालक की रक्षा होगी।"

फिर बाबा को जगन्नाथ पंडित का स्मरण हुआ। कहने लगे, "वे वृद्ध थे, गंगा के किनारे सोये थे। अप्पय्य दीक्षित स्नानार्थ जा रहे थे। सोये हुए पंडित को देख कर उन्होंने कहा :

"किं निःशंकं शेषे, शेषे वयसि त्वमागते मृत्यौ।
अथवा सुखं शयीथाः निकटे जागर्ति जाह्नवी जननी।"

क्रांतियात्रा के संस्मरण

अखबार में विनोबाजी इंग्लैंड जाने वाले हैं, ऐसी खबर आयी थी। तिरुनेलवेली के पत्रकार पूछने आये थे, तो विनोबाजी ने कहा : "भारत में भूदान-आंदोलन का उद्देश्य पूरा होने पर विनोबा सर्वोदय-आदर्श के प्रचार के लिए कहीं भी–स्वर्ग में या नरक में जहाँ भगवान् की इच्छा हो–जा सकता है।"

विनोबाजी की अंगुली में पेन की स्याही लग गयी थी। वह उनके ध्यान में आया। कहने लगे—"विद्या लग गयी रे ऽऽऽ विद्या।" फिर तुकारामजी का अंक अभंग गुनगुनाने लगे :

"बरे देवा कुणबी केलों। नाहीं तरि दंभें असतो मेलों॥
विद्या असती कांहीं। तरी पड़तों अपायीं॥
सेवा चुकतों संतांची। हेचि नागवण फुकाची॥
तुका म्हणे थोरपणें। नरक होती अभिमानें॥"*

—महादेवी

क्रान्ति के लिए सबका मत-परिवर्तन आवश्यक

(विनोबा)

सत्ताभिलाषी लोग संघटना बनाते हैं। हम राजवादी नहीं हैं, लोकसेवावादी हैं। अगर हम राज चाहते हैं, तो आत्मा का राज चाहते हैं। करुणा का राज चाहते हैं। हम बाहरी राज नहीं चाहते।...कुछ लोग अपना थोड़ा-सा समय फुरसत से इस काम के लिए देते हैं। हम उनका गौरव करते हैं, पर इस प्रकार फुरसत से किये गये कामों से क्रांति नहीं होती है। नदी में अपना स्रोत होता है, तो कितने भी नाले मिलें, हर्ज नहीं। लेकिन मूल स्रोत न हो, तो नाले मिल कर नदी नहीं बनेगी! जो भिन्न-भिन्न लोग फुरसत से अपना समय देते हैं, उन पर नाले की यह उपमा लागू होती है। पर नदी का अपना मूल प्रवाह होना चाहिए। इस क्रांति-कार्य को अपना अलग 'मिशन' समझ कर अपना जीवन समर्पण करने वाला जब मनसा-वाचा-कर्मणा काम में लगता है, तो उसे दूसरे भी लोग आकर मिलेंगे। इस कार्य के लिए तन, मन, धन, समर्पण करने वाले लोग तैयार होने चाहिए।

राजनीतिक पक्षों से बाधा

राजनीतिक पक्ष वाले हमें मदद देते तो हैं, परंतु उनसे जितनी मदद मिलती है, उससे ज्यादा बाधा भी पहुँचती है! इसके लिए तिरुमंगलम् तालुके की मिसाल हमारे सामने है। कुल तालुका ही दान करने का निश्चय वहाँ के कुल गाँवों के प्रतिनिधियों ने किया था। कुछ ग्रामदान भी हो गये। पर बीच में निर्वाचन ने आकर भारी बाधा पहुँचायी। गाँव-गाँव में पक्ष-भेद, जाति-भेद बढ़ गये। तेवर, नाडर (तमिलनाड की जातियाँ) के बीच द्वेष बढ़ गये। यह कितनी दुखदायक घटना है! हम समझते हैं कि यह बात हिन्दुस्तान को खत्म करेगी। स्वराज्य के बाद हिंदुस्तान की कोई परीक्षा नहीं हुई। इस साल स्वराज्य के लिए दस साल हो रहे हैं, तो दो दिन की छुट्टी जाहिर की है! हमारी राय से छुट्टी देने की कोई जरूरत नहीं है। पर हम समझते हैं कि जाति-भेद का यह मसला चलेगा, तो हिंदुस्तान का स्वराज्य चंद दिनों का है। जाति-भेद से देश के टुकड़े-टुकड़े होते हैं। गाँव-गाँव में पक्ष हो गये हैं। ग्रामदान तो तब बनते हैं, जब सब लोग मिलजुल कर प्रेम से रहेंगे-सोचेंगे। इसलिए तिरुमंगलम् तालुके में जब दुबारा गये, तो कार्यकर्ताओं से सौ-दो-सौ ग्रामदान की आशा की थी, पर दस-बीस ही ग्रामदान मिले! इससे कार्यकर्ताओं को पश्चात्ताप भी हुआ। हम समझते हैं कि पश्चात्ताप का कोई कारण नहीं है, क्योंकि सद्विचार का जो प्रभाव पड़ता है, वह टिकता है। राजनीतिक लोगों से मदद लेने के बाबत एक मिसाल हमने बतायी। इसलिए राजनीतिक पक्षवालों से क्रांति का पहाड़ उठेगा, ऐसी कभी अपेक्षा हमने नहीं की थी, क्योंकि वे पक्ष सत्तावादी हैं और यह काम करुणा का है। पर हमने माना कि यह काम उन व्यक्तियों से होगा, जो राजनीति से अलग हैं। किसी राजनैतिक पक्ष से हमें मदद मिलेगी, ऐसा हमने नहीं माना है।

सबका मत-परिवर्तन वांछनीय

मालकियत का परित्याग, भूमि सबकी—यह विचार अत्यन्त करुणामय है। कई धर्मों के इतिहास में है कि गाँव-गाँव जाकर शक्ति से लोगों को ईसाई, मुसलमान, बौद्ध बनाया गया। उससे धर्म को कुछ लाभ नहीं है। केवल उस-उस समाज की संख्या बढ़ती है, याने बोझ ही बढ़ता है! इसकी कोई कीमत नहीं है। लेकिन हम हर व्यक्ति का 'कन्वर्शन' (मत-परिवर्तन) माँगते हैं। और इस तरह हवा चलती है, तो काफी लोग विचार मान्य करते हैं, पर जिन्होंने यह मान्य किया और अपना जीवन उस विचार के अनुसार परिवर्तन किया, ऐसे लोग निकल पड़ेंगे, तब यह बात फैलेगी।

इतने बड़े तिरुनेलवेली शहर में हम आये हैं। यहाँ जीवन समर्पण करने वाले क्या पाँच-पचीस लोग हमें नहीं मिलेंगे! जो इस विचार को समझे नहीं हैं, उन पर मैं भार नहीं डालना चाहता; पर जो इसे समझे हैं, उनकी बात करता हूँ। ज्यादा उम्र होने के बाद घर छोड़ कर समाज-सेवा में लग जाना चाहिए। यह हिंदू धर्म की खूबी है। आज की हालत में वानप्रस्थ का अर्थ है–घर छोड़ कर समाज की सेवा में काया, वाचा, मन से लगना। भूदान-यज्ञ में जंगल जाने की जरूरत नहीं है। आपको इस काम के लिए घर से निकलना चाहिए।

(तिरुनेलवेली, ९-४-'५७)

* हे भगवान्! तुमने बहुत अच्छा किया। मुझे किसान बनाया। नहीं तो मैं घमंड में मरता, अगर कुछ विद्या रहती, तो अपाय में पड़ता और संतों की सेवा से वंचित हो जाता। इससे व्यर्थ ही मेरी बर्बादी हो गयी होती। तुकाराम कहता है–बड़प्पन के अभिमान से नरक-प्राप्ति होती है।

www.vinoba.in

गोसंवर्धन का आधार : ग्रामदान

(द० मं० बुरडे, पंचवटी गोसेवा-आश्रम, बेंगलूर)

गत पाँच साल से हम लोग दक्षिण में बेंगलूर के पास पंचवटी-आश्रम चला रहे हैं, जिसका लक्ष्य है—कृषि-गो-सेवा के माध्यम से ग्रामों की सर्वांगीण सेवा करना। पाँच गायों से और पाँच गाँवों से काम शुरू हुआ। कार्यकर्ता भी हम पाँच ही थे। विनोबाजी ने निधि-मुक्ति और तंत्र-मुक्ति का ऐलान किया, जो हमारे लिए भी वह एक वरदान साबित हुआ। तंत्र की 'यंत्रवृत्ति' और निधि का 'परावलंबित्व' संस्थाओं को भी कम नहीं सताता है। निधियों से हमें मदद तो मिलती रही, लेकिन इससे हमारे दिल में प्रकाश फैला और हमने राम-सन्निधि का आश्रय लेना शुरू किया। परिणामस्वरूप कार्यकर्ताओं में आत्मविश्वास जगा, ग्रामवासियों ने सहयोग दिया। नवयुवकों ने तो बीस हजार घंटों तक का श्रमदान किया और अप्रत्याशित सहायता भी मिलने लगी—जैसे श्री पी० सर्वोत्तम् नायकजी की ओर से एक बिलवारद ग्राम कार्य करने के लिए मिला। १०६ एकड़ जमीन उन्होंने आश्रम को खरीद कर दी और अपनी ७५ एकड़ जमीन भी ऐसे प्रयोगों के लिए खुली रखी। हम लोगों का आत्मविश्वास तो जाग्रत हुआ ही, लेकिन जनसंपर्क की और जन-सहायता की जो अनुभूति हमें मिली, वह हमारे लिए बड़ी प्रेरक रही है।

आज हमारा दृढ़ विश्वास हो गया है कि गोसंवर्धन का कार्य ग्रामदान के पश्चात् ही आगे बढ़ सकेगा। गोसंवर्धन में संलग्न अनेक शक्तियों से मेरा प्रत्यक्ष संपर्क आया। मैंने सरकार से लेकर जनता-आधारित अनेक संस्थाओं का कार्य देखा, लेकिन कहीं भी आशाजनक स्थिति का दर्शन नहीं हुआ। गोवध-बंदी-आंदोलन चलाने वालों ने इस काम में कम शक्ति नहीं लगायी। पैसा भी इस पर काफी खर्च हुआ है। कुछ प्रांतों में गोवध-बंदी-कानून भी बन गया है। मगर बेचारा कानून तो कानून ही ठहरा! उसका कोई अच्छा असर नहीं दीख पड़ता। चमड़े के लिए गोधन की चोरी मामूली घटना बन गयी है। हमारे मैसूर प्रान्त में गत पाँच वर्षों से जीवदया-मंडल, जैन-संघ ने बड़ी श्रद्धा के साथ सरकार को एक लाख रुपया गोसदन के लिए दे रखा है, पर गोसदन का प्रबंध अभी तक नहीं हो पाया! गोसदन की योजना जिन लूले-लंगड़े, वृद्ध और सेवा-निवृत्त पशुओं के लिए है, वे न घर के हैं, न घाट के। मेहनत से की हुई खेती आदि को नुकसान पहुँचाने का काम बेकार पशु कर रहे हैं।

सरकारी पशु-पालन-योजना में गाय कहीं एक कोने में ही पड़ी रहती है। पंडितों की व्याख्या में पशु-पालन में भैंस, बैल, बकरी, मुरगी, घोड़े, मछली पहले आती हैं, बाद में कहीं गाय! सरकार की सीमित शक्ति ठहरी। गोसंवर्धन के कार्य में सरकार थोड़ी-बहुत प्रदर्शनियाँ, इनाम, रेडियो-भाषण, कुछ साँड़-वितरण आदि कर सकती है। साँड़-वितरण की पद्धति दोषपूर्ण है। फी साँड़ सरकार पाँच सौ रुपया देती है, जब कि एक बढ़िया साँड़ तैयार करने में पंद्रह सौ रुपये से कम खर्च नहीं लगता। इस दोषपूर्ण पद्धति के कारण दिन-ब-दिन बढ़िया साँड़ों का और गायों का अभाव हो रहा है।

हमारे आर्थिक जीवन में ग्राम ही मुख्य आधार है और गाय ग्रामदेवी है। आम जनता इस तत्त्व को भूल गयी है। कुछ लोग गाय के प्रति सद्भाव रखते हैं। वे गोरक्षा के नाम से कुछ पैसे दे देने, गोपाष्टमी के दिन चार पैसे का चारा बाजारू गाय को खिलाने, तिलक लगाने, फूल चढ़ाने और हाथ जोड़ कर उसे प्रणाम करने में पुण्य मानते हैं। विनोबाजी ठीक ही कहते हैं कि गाय की सेवा हम क्या कर सकते हैं, वही हम सबकी हजारों साल से सेवा करती आ रही है। भारतीय संस्कृति का अधिष्ठान ही गाय है।

हमारा आश्रम ग्रामों के बीच है। पाँच सालों में ग्रामों के सहारे से हमने गोसंवर्धन की ओर बढ़ने की भरसक चेष्टा की। आज हमें अंशतः सफलता भी मिली। हमारी योजना यही रही कि हर फिरके में एक नंदीशाला हो और उसके प्रति ग्रामनिवासी ऊँची निगाह से देखें। हर ग्राम में एक नंदी और एक नंदीशाला रहे। उसका सारा खर्च ग्रामीण जनता उठाये। हमारे पंचवटी-क्षेत्र में जहाँ शुरू में एक भी नंदीशाला नहीं थी, आज ४ साँड़ हैं और दो वृषभ-सुधार-केंद्र हैं। यह सब वैयक्तिक रूप में हो रहा है। इसके स्थायित्व का भरोसा नहीं। इस काम को उठाना हो, गोसंवर्धन के कार्य को स्थायी और शास्त्रीय बनाना हो, तो ग्रामदान से ही यह कार्य होगा। ग्रामदान ही आज सभी समस्याओं का रामबाण उपाय है, मेरी यह मान्यता दृढ़ होती जा रही है।

—

कर्नाटक में ग्रामदान की प्रगति

(बाबू कामत)

कर्नाटक में यद्यपि अब तक बारह ही ग्रामदान मिल पाये हैं, तो भी उसका गहरा असर इर्दगिर्द के देहातों पर हुआ है। सामूहिक पदयात्रा का सतत प्रचार का नतीजा यह है कि गाँव-गाँव के लोग ही अब कमर कस रहे हैं। जब किसी आंदोलन को जनता अपना लेती है, तो उसकी रफ्तार तेज होती है। अब तक हमें भास होता था कि हम क्रांति की ओर जा रहे हैं। लेकिन अब तो क्रांति ही हमें दौड़ा रही है। पैसे के बिना काम कैसे चलेगा, इसकी पहले चिंता थी। लेकिन जैसे ही निधि-मुक्ति की बात लोगों तक पहुँची, लोग पदयात्रा की फि[illegible] स्वयं ही करने लगे हैं। दिक्कतें तो निष्ठा की कसौटी ही नहीं, बल्कि निष्ठावानों को खींच लाने में मददगार साबित हो रही है।

निधि-मुक्ति से नम्रता और ग्रामदान से निःस्पृहता का मनोहर समवाय सेवकों में सध गया है। ग्रामीणों के सहकार के बारे में हम पहले सूक्ष्म लापरवाही भी थी, लेकिन अब सहज ही सुंदर संपर्क सध जाता है। भूदान की तरफ न ताकने वाले कई वृद्ध महर्षि अब सारी शक्ति ग्रामदान में ही लगा रहे हैं।

लेकिन कार्य का स्वरूप इतना विराट है कि सारी विधायक शक्ति इसमें जुट जानी चाहिए, ताकि संयम और त्याग वेग और भोग के साधन बन पायें। इस सबकी आहट इन ग्रामदानों से हमारे प्रांत-प्रमुख श्री तिमप्पा नायक को मिली और उसका बयान पूज्य विनोबाजी को पेश किया गया। निम्नलिखित पत्रों के रूप में विनोबाजी ने समस्त कन्नडियों को चेतावनी दी है :

> "(केरळ के) नंतर कर्नाटक तो है ही। और मैं किसी प्रदेश को पूरा न्याय दिये बिना आगे बढ़ना नहीं चाहता। इसकी तैयारी में दो बातें सब सेवकों को करनी चाहिए—एक तो ग्रामदान का निरंतर जप और दूसरी चीज—व्यापकतम साहित्य-प्रचार। तालुका-दान की बात आपके पत्र में है। प्रथम संकल्प, पीछे वाक्-प्रकाश, फिर कार्यसिद्धि, यह यशस्वी कर्मयोग का क्रम ही है।
>
> "घृतं मे चक्षुः। अमृतं मे आसन्"—मेरी आँख में घृत और मुख में अमृत रहे, यह वैदिक प्रार्थना हमारे जीवन में उतरे तो कर्नाटक मनोहर नाटक करेगा, इसमें शक नहीं। —विनोबा"

• • •

"कर्नाटक में ग्रामदान का आरंभ हुआ, यह जान कर बड़ी खुशी हुई। पुराने आंदोलन में कर्नाटक ने जिस श्रद्धा से अपना हविर्भाग समर्पण किया था, वह देखते हुए आश्चर्य होता था कि कर्नाटक अब तक क्यों नहीं जाग रहा है। खैर, आप लोगों के सतत प्रयत्न से आखिर वह जाग गया है। और इससे आगे चंद ही दिनों में उसकी पूर्ण क्रांति प्रगट होगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

"आप देख रहे हैं कि करीब छह साल से बाबा इस आरोहण-कार्य में प्रतिदिन कुछ कर ही रहा है। इसका नाम है—सातत्य योग, जो गीता के आठवें अध्याय का विषय है। यही भक्ति की कसौटी भी है। देवता परिपूर्ण, एकाग्र उपासना के बिना प्रसन्न नहीं होते, इसका अनुभव आता ही रहता है। मैं आशा करता हूँ कि कर्नाटक के हमारे सर्वोदय-प्रेमीजन अनेक कामों को जरा दूर रख कर एक दिल से इसमें लग जायेंगे।

"इधर तमिलनाड का काम अच्छी तरह प्रगति कर रहा है। रचनात्मक कार्यकर्ताओं को भी क्रांति का भान हो रहा है। इस प्रदेश की यात्रा समाप्त होने पर हम केरळ में प्रवेश करेंगे। ईश्वर ने चाहा, तो केरळ के बाद कर्नाटक है ही। आप लोग ग्रामदान में पूरा समय दे सकते हैं। हमारे कर्नाटक-प्रवेश के पहले सैकड़ों ग्रामदान प्राप्त करके क्रांति-देवता को जगाइये। साथ-साथ साहित्य-प्रचार होते रहना चाहिए। खास करके शहरों में। यह काम तो भूदान-कार्यकर्ताओं के अलावा दूसरे कार्यकर्ता भी ले सकते हैं। —विनोबा"

—

—हम एक क्रियाशील लोकमत तैयार करना चाहते हैं। काम अच्छा है और उस पर अमल होता है, तब तो वह सक्रिय है। क्रियावान लोकमत जाग्रत हो जायगा, तो छोटे-छोटे लोग अपनी मालकियत पटक देंगे, तब बड़े लोग पीछे से अपने आप आयेंगे। बड़े लोगों ने मन से तो कबूल कर ही लिया है कि बाबा का यह विचार सही है।

(पापानायकन्पट्टी, १९-३) — —विनोबा

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की क्रांति-यात्रा से–

(मीरा व्यास)

प्रातःयात्रा का आरंभ हो चुका था। पड़ाव की दूरी अधिक होने के कारण इन दिनों घने अंधकार में ही सवा चार बजे विनोबाजी निकल पड़ते हैं। उस दिन पहले से ही बादल छाये हुए थे, तीन-चार फर्लांग जाते ही बूंदें पड़ने लगीं। वर्षा बाबा को सदैव ही गति देती है। उस दिन भी उन्होंने दौड़ना शुरू किया। फिर उन्होंने नाना प्रकार की चालों की नकल कर सबको खूब हँसाया। पहले तो गुजरात के मजदूर की चाल बतायी और जोर-जोर से बोलने लगे, "भारा ल्यो रे भारा।" फिर आयी मराठी स्त्री "···दही घेता का दही।" फिर तो हमारे गुरुजी (सुब्रह्मण्यमजी) को भी उत्साह आया और उन्होंने तमिल शुरू की–"तै···रा···(दही)पा···लू···(दूध)" फिर तो बाबा और गुरुजी, दोनों ने अपनी कला शुरू कर दी।

जयपुर के श्री गोविन्दभाई झालानी आये थे। उनके कारण हम यात्रियों को दो-तीन दिन मिष्टान्न प्राप्त हुआ। उन्होंने सवाल पूछा "आप सारे समाज को नारायण-स्वरूप समझने की बात करते हैं, परंतु अत्यंत दुराचारी मनुष्य को भगवद्स्वरूप कैसे समझा जाय? पाणिनि के सामने जब व्याघ्र आया होगा, वे कैसे उनको भगवद्स्वरूप समझ सके होंगे?"

विनोबाजी ने कहा: "रूप भिन्न-भिन्न होने पर भी ईश्वर का सर्वत्र वास है। सबमें ईश्वर देखने की शक्ति होनी चाहिए। मान लीजिये कि सोने की एक अंगूठी है। किसी बालक को उसका बाह्याकार पसंद नहीं है, तो वह उसे तुरंत फेंक देता है, परंतु सुनार उसे नहीं फेंकता, क्योंकि वह बाह्याकार नहीं देखता। उसे सुवर्णत्व की पहचान है। वैसे ही जिसे ईश्वर-स्वरूप की पहचान है, वह कभी बाह्याकार नहीं देखता। हाँ, जैसे वैद्य किसी बीमार की बीमारी दूर करने की कोशिश करता है, वह रोग से घृणा करता है, पर रोगी को तो वह प्यार ही करता है, वैसे ही सबमें ईश्वर-रूप देखने वाला दुराचारी के दुराचार से घृणा करेगा, उसको हटाने की कोशिश करेगा।

"अब आपने पूछा कि पाणिनि ने व्याघ्र में ईश्वर-दर्शन कैसे किया होगा? देह को चट कर जाने वाला प्राणी जब सामने आ खड़ा हो, तब उसे ईश्वर-रूप समझना कठिन अवश्य है, परंतु अशक्य नहीं है। परंतु पहले यह तो बताओ कि तुम अपने आपको ईश्वर-रूप मानते हो कि नहीं? अगर तुम अपने को ईश्वर-रूप समझते हो, तो उसे ईश्वर-रूप समझने में तुम्हें क्या एतराज है? मान लो कि तुम्हारे सामने तुम्हारे ज्ञान के लिए एक थाली में सेव रखे हैं। उसे देखते ही तुम्हारे मुँह में पानी छूटता है। खाने के लिए तुम हाथ बढ़ाते हो, उतने में ही मान लो कि वह भागना शुरू करता है, तो तुम उसके पीछे पड़ कर उसे पकड़ोगे कि नहीं? तो, तुम्हारे और बाघ में फर्क कहाँ रहा? फिर उसको ईश्वर-रूप समझने में क्यों दिक्कत होनी चाहिए? हाँ, पहले अपने को ईश्वर-रूप समझना चाहिए। 'मैं यह देह नहीं हूँ,' इसका स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए। मान लो कि पाणिनि शिष्यों को पढ़ा रहे हैं और उतने में व्याघ्र आता है। पाणिनि को देह की आसक्ति तो है ही नहीं। उन्हें न मृत्यु की इच्छा है, न जीवन की वासना है। मरने का मौका नहीं आया है, तो मरने की कोई जरूरत नहीं है, परंतु मरने का मौका आया है, यह देख कर जान बचाने के लिए भागने की भी क्या जरूरत है? जो होना है, सो हो। एक दफा पवनार-आश्रम में मैं कमरे में था। रात के तीन बजे का समय था। एकाएक जोर-शोर से वातावरण में कुछ आवाज आने लगी। पहले लगा कि बारिश आने वाली है, फिर ध्यान में आया कि भूकंप हो रहा है! क्षण भर के लिए मन में खयाल आया कि कमरा छोड़ कर बाहर भाग जाऊँ, परंतु फिर सोचा कि मृत्यु अगर आने वाली है, तो बाहर जाऊँगा, तो भी आयेगी और अगर जिन्दा रहना है, तो यहाँ रह कर भी मृत्यु मुझे मार नहीं सकेगी, तो फिर कायरता से बाहर क्यों भागूँ? यह सोच कर आँख मूंद करके मैं वहीं समाधि लगा कर बैठ गया। इसी तरह सम्भव है कि पाणिनि को भी सामना करने का कोई कारण न दिखा हो, बल्कि अपनी देह किसीके उपयोग में आ रही है, इसका आनन्द भी हुआ हो। ऐसा कहते हैं कि अहिंसक मनुष्य अगर खुद चाहे, तो सामने वाले का परिवर्तन कर सकता है। पाणिनि भी इतने अहिंसक हो सकते हैं कि व्याघ्र का परिवर्तन कर सकें, परंतु उन्होंने चाहा ही नहीं होगा कि व्याघ्र उन्हें न मारे।"

हृदय-परिवर्तन की एक मिसाल पेश करते हुए विनोबाजी ने एकनाथ की एक कहानी सुनायी: "एक समय एकनाथजी के घर में रात को चोर आया। सोने के गहनों की एक पेटी उठा कर वह भागने लगा। एकनाथ की पत्नी ने पति को जगा कर सारी बात बतायी। एकनाथजी ने पूछा, "सब ले गया कि और कुछ बचा है?" पत्नी ने बताया कि एक पेटी बच गयी है। एकनाथजी उसे हाथ में लेकर चोर के पीछे दौड़े और उन्होंने उसे पकड़ लिया। बोले, "अरे भाई, तुमने जल्दी-जल्दी में एक ही पेटी ली, दूसरी तो वहीं छूट गयी! यह भी ले लो!" यह कह कर पेटी चोर के हाथ में दी। बेचारा चोर शर्मिन्दा हो गया। इस तरह उन्होंने चोर का परिवर्तन किया।"

भक्ति के बारे में चर्चा करते हुए विनोबाजी ने कहा, "ज्ञानयोग, कर्मयोग, ध्यानयोग, भक्तियोग–इन सबमें भक्तियोग कठिन नहीं है, ऐसा माना जाता है। परंतु भक्ति भी आसानी से प्राप्त होने वाली वस्तु नहीं है। हिंदुस्तान में भक्ति ज्यादा है, ऐसा जो कहा जाता है, वह "भक्ति" नहीं है, वह "श्रद्धा" है। भक्ति और श्रद्धा में अन्तर है। आज मंदिर की मूर्ति के लिए जो आस्था है, वह "भक्ति" नहीं है, वह "श्रद्धा" है। श्रद्धा भक्ति नहीं है, वह भक्ति-मार्ग अवश्य है। श्रद्धा ऐसी चीज है, जिसका होना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है, परंतु जिसका न होना बड़ी बात है। जैसे आपको अक्षरज्ञान हुआ, तो वह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है, परंतु अक्षरज्ञान ही नहीं है, तो आगे का ज्ञान प्राप्त करना असंभव ही है। इस तरह श्रद्धा होना कोई बड़ी बात नहीं है, परंतु श्रद्धा न हो, तो भक्ति आ ही नहीं सकती। भक्ति का अर्थ है–अहंकार-ममता से मुक्ति! घमंड छोटी चीज है। घमंड न होते हुए भी मनुष्य में अहंकार हो सकता है। वह सूक्ष्म चीज है। भक्त मनुष्य के चित्त पर संस्कारों का असर नहीं होता है याने सुख-दुःख, मानापमाना की वृत्ति पैदा नहीं होती है। भक्त सदा आनंदी रहता है। यह भक्त का लक्षण है। मनुष्य को सबसे ज्यादा वासना पुत्रादि की होती है। मनुष्य अपने को यह देह ही मानता है। वह समझता है कि मैं मर जाऊँगा, तो मेरा पुत्र ही मेरा यानी इस देह का प्रतिनिधित्व करेगा, परंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। वह तो एक यांत्रिक वस्तु है। मिट्टी में गेहूँ का बीज बोया गया, तो गेहूँ मिट्टी के गुणों का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। उसका अपना एक स्वतंत्र गुण है। वह सिर्फ मिट्टी के द्वारा पैदा होता है। वैसे ही कोई वासना-बीज माँ के पेट में पैदा होता है, तो वह माँ के गुणों का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। हाँ, अपनी वासना के मुताबिक वह जो गुण चाहिए वह लेता है। तो भक्ति का अर्थ है–'मेरा-तेरा मिटाना।' यही तो ग्रामदान है।"

ता० ५ अप्रैल को शंकरकोविल में कम्युनिटी प्रोजेक्ट के प्रमुख, श्री डे, विनोबाजी से मिलने के लिए आये थे। उन्होंने कहा, "आज तक मैं ग्रामपंचायतों के बारे में अत्यंत चिंतित था, क्योंकि गाँव में जो पंचायत बनती थी, वह ज्यादा पढ़े-लिखे, संपत्तिवान, भूमिवान, सरकार में वजन रखने वाले लोगों की ही बनती थी, इस वास्ते गाँव का काम बनता नहीं था, उन्हीं लोगों तक वह सीमित रहती थी। परंतु ग्रामदान से पंचायत का मेरा सवाल हल हो गया। ग्रामदान के गाँवों को हम तरजीह तो देते हैं, परंतु हमसे और क्या मदद की अपेक्षा करते हैं?

विनोबाजी ने कहा, "पाँच साल पहले जब कम्युनिटी प्रोजेक्ट शुरू हुआ, तब हमने कहा था कि जैसे बारिश सब जगह बिना किसी शर्त बूंद-बूंद पानी बरसाती है, वैसे ही कम्युनिटी प्रोजेक्ट सारे देश के लिए होना चाहिए। ग्रामदान के काम के लिए अभी तक सरकार से कुछ नहीं माँगा है, बल्कि हम तो एक वातावरण तैयार कर रहे हैं। पहले से हम यही दावा कर रहे हैं। लेकिन जब देश में ढाई सौ गाँव जमीन की अपनी मालकियत पटक देते हैं, तो सरकार उदासीन नहीं रह सकती, उसे सोचना पड़ता है। कोरापुट में पंद्रह सौ ग्रामदान हुए, वहाँ व्यक्तिगत मालकियत नहीं रही, तो सरकार को कानून में सामूहिक मालकियत स्वीकार करनी पड़ी। इतना फर्क सरकार को करना ही पड़ा। इस विचार को उत्तेजन देने के लिए 'सरकार प्रतीक के तौर पर कुछ करे,' इससे ज्यादा हम सरकार से नहीं चाहते हैं। बाकी का काम हम जन-शक्ति से निर्माण करेंगे। मिसाल के तौर पर कर्ज के बारे में–सरकार उसकी सामूहिक तौर पर योजना कर सकती है। हम सिर्फ आपका प्रतीक चाहते हैं। प्रतीक से ज्यादा मदद होगी, तो नुकसान है। आखिर ग्रामदान फैलेगा, तो न सिर्फ कम्युनिटी प्रोजेक्ट बदलेगा, पंचवर्षीय योजना आदि का और सरकार का रंग ही बदल जायगा। इस काम के लिए सरकार की सहानुभूति रहे, बाकी का काम लोगों को ही करने दो।"

www.vinoba.in

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

(लोकसेवकों से प्राप्त विवरण का सार)

आसाम : (१) श्री खगेश्वर भूयाँ (१ जनवरी से १० फरवरी तक) इस प्रदेश के ६ जिलों में ७५० गाँवों में १७५८ मीलों की पदयात्रा की गयी। ६४८ दाताओं द्वारा २२२८ एकड़ जमीन मिली। १७२ दाताओं द्वारा ३६१९) साधन-दान प्राप्त हुआ। भूदान-पत्रों के १०६ ग्राहक बनाये गये। ७८१) की साहित्य-बिक्री हुई। १५१ लोकसेवक (सत्याग्रही) तैयार हुए। ग्रामदान की संख्या १५ तक गयी है।

उड़ीसा : (१) रमादेवी चौधरी, केओंझर (जनवरी-फरवरी) केओंझर जिले के उरूली गाँव में भूदान-शिविर हुआ। शिविरार्थियों के साथ ८५ गाँवों में ग्रामदान का विचार-प्रचार किया।

(२) श्री रामचन्द्रजी मिश्र, गंजाम (१ जनवरी से १५ मार्च तक) भंजनगर सबडिविजन के जगन्नाथप्रसाद थाने के अंतर्गत ७ ग्रामदान मिले, जिनमें प्रायः आदिवासी कंध लोग रहते हैं। उदयगिरी थाने में भी १ ग्रामदान हुआ।

(३) सर्व-सेवा-संघ, कोरापुट (१ जनवरी से ३१ मार्च) १८९४ दाताओं से ७२ ग्रामदान मिले। १२८५ परिवारों में ८,४२,२७० एकड़ तक वितरण हुआ।

बिहार : (१) श्री शिवशंकर, दरभंगा (१ फरवरी से ३१ मार्च) भूदान-प्राप्ति तथा वितरण,संपत्तिदान-प्राप्ति, पदयात्राओं द्वारा प्रचार किया।साहित्य-बिक्री हुई।

(२) श्री उदितराम बरई,धनबाद (जनवरी और फरवरी अंत तक) प्रचार-कार्य।

(३) श्री अनिरुद्धसिंहजी, सबडिविजन अररिया, जि० पूर्णियाँ (जनवरी से फरवरी अंत तक) श्री जयप्रकाश नारायण के आह्वान से स्वयं 'जीवन-दानी' बने। तंत्रमुक्ति के पश्चात् आरंभ में कुछ कष्ट सहने पड़े। पदयात्रा आरंभ की। सूतांजलि, साहित्य-बिक्री, प्रचार आदि कार्य हुए। शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें सब पक्षों के व्यक्तियों ने भाग लिया। वितरण की पूर्वतैयारी की।

(४) श्री बिन्दुजी, सबडिविजन, रानीपतरा, जि० पूर्णियाँ (जनवरी से मार्च अंत तक) सुपौली थाना के अंतर्गत श्रीमत्ता नाम का ग्रामदान हुआ। भू-वितरण, संपत्तिदान, साहित्य-बिक्री, पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना, प्रचार तथा कार्यकर्ताओं का निर्माण, भूक्रांति-दिवस की पूर्वतैयारी की, शिविर का आयोजन हुआ।

(५) श्री अवधकिशोरसिंहजी, नवगछिया, जि० भागलपुर (२६ मार्च से ७ अप्रैल तक) भूदान-शिविर हुआ। भूवितरण-कार्य, प्रचार-कार्य हुआ। समयदान-पत्र प्राप्त हुए।

(६) श्री रामनारायण सिंह, मुंगेर (७ अप्रैल तक) अशरगंज, दलसिंहसराय, जमुई, खगड़िया और बेगुसराय सबडिविजन में प्रचार-कार्य हुआ। श्रमभारती, खादीग्राम की टोली व सभी पक्षों के व्यक्तियों और विद्यार्थियों ने भाग लिया। लगभग सात सौ शिविरार्थियों को प्रशिक्षण दिया गया। श्री जयप्रकाशजी की अपील पर ३५० व्यक्तियों ने समय-दान दिया। साहित्य-बिक्री हुई।

(७) श्री बृजमोहन शर्मा, बेगुसराय (२६ मार्च से ७ अप्रैल तक) भूदान-शिविर का आयोजन किया, जिसमें सर्वसाधारण जनता का पर्याप्त सहयोग रहा। श्री जयप्रकाश नारायण की अपील पर कालेज के ३४ छात्रों और १८ ग्रामीण भाइयों ने एक वर्ष का समय-दान दिया। भूवितरणार्थ टोलियाँ निकलीं।

(८) श्री उदितनारायण कपालिया, गया (माह मार्च) भू-वितरण के लिए फुलपराश, लोकहा, लदनियाँ और खजौली थानाओं में पूर्व-तैयारी की।

बंगाल : (१) श्री चारुचन्द्र भण्डारी, २४ परगना (१ जनवरी से १५ मार्च तक) इस अवधि में सामूहिक पदयात्रा हुई, इसमें पूर्ण समयदानी व कहीं-कहीं आंशिक समयदानी थे। गाँव-गाँव में प्रचार किया गया। भूदान, सम्पत्तिदान साधन-दान व साहित्य-बिक्री आदि कार्य हुए। भूदान-पत्रों के ग्राहक बनाये गये। भू-वितरण भी हुआ। लोक-सेवक और सेविकाओं से निष्ठापत्र प्राप्त हुए।

(२) श्री फणीन्द्र भूषण बनर्जी, पुरूलिया (१ जनवरी से मार्च अंत तक) सभाएँ, प्रभात-फेरियाँ, कार्यकर्ताओं की बैठकें तथा सार्वजनिक सभाएँ की गयीं। प्रचार-सभाएँ और शिविर आयोजित किये गये। भूदान तथा भू-वितरण-कार्य हुआ। साहित्य-बिक्री हुई। भू-क्रांति-दिवस की पूर्वतैयारी की।

(३) श्री मोहिनी मोहन राय, बांकुड़ा; (४) श्री लालबिहारी सिंह, वीरभुम और (५) श्री कुमारचन्द्र जाना, खंजनचक (मेदिनीपुर) : सबने अपने-अपने क्षेत्र में भू-प्राप्ति तथा वितरण-कार्य और सर्वोदय-प्रचार किया।

(६) श्री क्षितीशराय चौधरी पो० बलरामपुर, जि० मेदिनीपुर (१ जनवरी से १५ मार्च तक) इस क्षेत्र का अधिकांश भाग कम्युनिस्टों से प्रभावित होते हुए भी यहाँ का कार्य उत्साहप्रद और ग्रामदान के वातावरण के अनुकूल है। पदयात्राएँ, सभाएँ की गयीं। भू-प्राप्ति तथा वितरण हुआ। सम्पत्तिदान, साधनदान प्राप्त हुए। साहित्य-बिक्री हुई, ग्राहक बनाये गये।

बंबई-गुजरात : (१) श्री नानूभाई देसाई, अहमदाबाद (जनवरी से मार्च तक) भूदान-कार्यकर्ताओं की बैठक, लॉ कालेज व गवर्नमेंट बॅकवर्ड क्लास-होस्टेल के विद्यार्थियों के साथ चर्चा और आवाहन। 'भूमिपुत्र' के ग्राहक बनाना, समयदान-पत्र व शिविर-आयोजन आदि कार्य हुए।

(२) झवेरभाई गोरधनभाई पटेल, बड़ौदा (१ जनवरी से १८ मार्च) पू० श्री रविशंकरजी महाराज की पदयात्रा ता० १ जनवरी से इस जिले में आरंभ हुई। ४०८ मीलों में १३० गाँवों में प्रचार किया। भूमिदान, भू-वितरण-कार्य हुआ। करमदी गाँव ग्रामदान में मिला। सर्वोदय-सम्मेलन हुआ। सर्वोदय-विचार-शिविर हुआ।

(३) श्री जी. जी. मेहता, बनासकांठा (जनवरी से मार्च तक) जिला-पदयात्रा तथा शहर-पदयात्राओं और स्थान-स्थान पर शिविरों द्वारा प्रचार। भूदान, भूवितरण, भूदान, साहित्य-बिक्री, पत्रों के ग्राहक बनाना, सम्पत्तिदान, साधन-दान आदि कार्य हुए। ग्रामदान का प्रचार। विद्यार्थियों का सहयोग मिला।

(४) श्री वसंतभाई व्यास, राजकोट (फरवरी से मार्च) पदयात्रा, राजनीतिक दलों के व्यक्तियों व विद्यार्थियों से विचार-विनिमय, साहित्य-प्रचार-सभाएँ, शहरों व देहातों में प्रचार, ग्रामदान का विचार-प्रचार।

बम्बई शहर : (१) श्री गजानन पवार, 'जी' वार्ड (१६ जनवरी से ३१ मार्च अंत तक) श्री दादा धर्माधिकारी व विमलाबहन ठकार की प्रमुख स्थानों पर प्रचार-सभाएं आयोजित कीं। श्री दादा व निर्मला देशपांडे की कार्यकर्ताओं से चर्चाएँ हुईं। महिलाओं और छात्रों से समय-दान मिला। राजनैतिक व सामाजिक कार्यकर्ताओं से व्यक्तिगत भेंट आदि कार्य हुए।

(२) श्री श्रीरंग देशपांडे, 'ए' वार्ड (१५ जनवरी से १५ मार्च तक) श्री दादा धर्माधिकारी के विचार-शिविर का प्रचार तथा श्री विमलाबहन ठकार के प्रचार दौरे की पूर्वतैयारी। साहित्य-बिक्री, सभाएँ हुईं।

(३) श्री एकनाथ भगत, 'ई' वार्ड (२६ फरवरी से २६ मार्च) प्रचार-सभाएँ मात्र हुई हैं। सम्पत्तिदान और साहित्य-बिक्री हुई।

(४) श्री कांतिलाल वोरा, 'एच २' वार्ड (१ जनवरी से १५ मार्च) सम्पत्ति-दान, साहित्य-बिक्री हुई, प्रचारार्थ एक सभा की, भूदान-पत्रों के ७३ ग्राहक बनाये।

(५) श्री जयकुमार वोरा, 'एच १' वार्ड (१ जनवरी से फरवरी अंत तक) श्री विमलाबहन ठकार की ४ सभाएँ हुईं। श्री दादा धर्माधिकारी के विचार-शिविर हुए। प्रचार अच्छा हुआ। भूदान-पत्रों के ४६६ ग्राहक बने।

(६) श्री इन्द्रवदन मेहता, 'डी' वार्ड (जनवरी व फरवरी) श्री विमलाबहन ठकार की ६ सभाएँ हुईं। श्री दादा धर्माधिकारी का विचार-शिविर हुआ। साहित्य-बिक्री हुई, ७१०) के सम्पत्तिदान-पत्र प्राप्त हुए। ४२ ग्राहक बनाये गये।

बंबई-महाराष्ट्र : (१) निर्मला देशपांडे, औरंगाबाद (मार्च अंत तक) भूदान-शिविर आयोजन के विचारार्थ बैठक हुई। ता० २५ से ३१ तक पैठण तहसील में पदयात्रा हुई। यह इस जिले में पहली पदयात्रा थी। श्री शिवाजी भावे ने पदयात्रियों को आशीर्वाद दिया। पदयात्रा द्वारा भूदान-प्राप्ति, भू-वितरण, साहित्य-बिक्री, पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना आदि कार्य हुआ।

(२) श्री शं० मा० विघोळकर, अहमदनगर (जनवरी से मार्च तक) पदयात्रा, गाँव-गाँव में प्रचार, भूदान-पत्र प्राप्त किये।

(३) श्री रा. वि. गांधी, नागपुर (१ जनवरी से मार्च अंत तक) भू-प्राप्ति तथा वितरण। विद्यार्थियों की सभाएँ व शिविर हुए।

(४) श्री नानाशेट शिंपी, दोंडाईचे (फरवरी व मार्च) भूदान-पदयात्रा द्वारा ६० गाँवों में ग्रामदान का प्रचार किया। भूप्राप्ति तथा वितरण-कार्य।

(५) श्री ठाकुरदास बंग, वर्धा (जनवरी से १५ अप्रैल) वर्धा जिले की तहसीलों में प्रचार। ३०० कार्यकर्ता द्वारा १ वर्ष का समय-दान मिला। कार्यकर्ताओं में उत्साह पाया गया। कॉलेज के विद्यार्थियों का सम्मेलन। गर्मी की छुट्टियों में कालेज के विद्यार्थियों द्वारा समय-दान। हिंगनघाट और आर्वी तहसीलों में दाता-आदाताओं का सम्मेलन।

(६) श्री प्रभाकर बापट, भण्डारा (जनवरी से १५ अप्रैल) सुखोडी नाम का १ गाँव ग्रामदान में मिला। गाँव-गाँव में संदेश पहुँचाया गया। पदयात्राएँ हुईं। ग्रामराज-सम्मेलन हुआ। भूदान, भू-वितरण, सम्पत्तिदान, साहित्य-बिक्री की तथा भूमिहीन परिवारों को बसाया गया। गोंदिया तहसील में एकग्रामदान 'टेकाटोला।'

(शेष अगले अंक में)

खादीग्राम, मुंगेर —सहमंत्री, अ. भा. सर्व-सेवा-संघ

www.vinoba.in

श्री विमला बहन की आसाम-यात्रा

बिहार की भूक्रांति-यात्रा समाप्त कर श्री विमला बहन २ अप्रैल को आसाम पहुँची। आसाम के शांतिप्रिय नागरिक नागा-समस्या तथा अन्य बहुत-सी समस्याओं के समाधान-हेतु चलने वाले हिंसक अभियानों को देख कर क्षुब्ध होकर महीनों से यह माँग कर रहे थे कि कोई पक्षातीत व्यक्ति प्रेम और अहिंसा का संदेश लेकर आता और आसाम प्रदेश का हिंसा और द्वेष का गरम वातावरण कुछ शांत करता। अतः श्री विमला बहन प्रांतीय विद्यार्थी-संमेलन के निमित्त सर्वोदय का, विश्वशांति का पावन संदेश लेकर आसाम गयीं।

अपने एक पखवारे के दौरे में श्री विमला बहन ने आसाम, मणिपुर और त्रिपुरा का भ्रमण किया। अनेक छात्रों व अध्यापकों की तथा सार्वजनिक सभाओं में उन्होंने सर्वोदय के विचार को रखा। आसाम में सभी प्रांतों की अपेक्षा सर्वोदय-विचार और भूदान-आंदोलन का प्रसार बहुत कम हो पाया है। शिक्षक, विद्यार्थी, वकील, डाक्टर, एम० एल० ए०, एम० पी०, सरकारी अधिकारी आदि को सर्वोदय-विचार की असलियत और गहराई को पहली बार समझने का मौका मिला। सबने बड़ी ही श्रद्धा और विश्वास के साथ कार्यक्रमों में भाग लिया और महसूस किया कि यही एकमात्र मार्ग है, जिस पर अमल किया जाय, तो आसाम की सारी उलझनों का निपटारा बखूबी हो सकता है।

एक पखवारे की यात्रा से बहुत ही आशाप्रद अनुकूल वातावरण बना। इस वातावरण का लाभ उठाने के लिए तथा आसाम में सर्वोदय-विचार को गहराई से पहुँचाने के लिए सबने सतत कार्य करनेका फैसला किया और आगे के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाया गया।

जनसमाजवादी पक्ष के मंत्री, कांग्रेस के नेता, शिक्षा-मंत्री, कई प्रोफेसरों तथा विधायकों ने भूदान-कार्य के लिए समय देने और मदद करने का निश्चय किया।

श्री विमला बहन ने आसाम प्रदेश की सबसे निकट और पेचीदी नागा-समस्या का भी गहराई से अध्ययन किया है। गौहाटी में ३ अप्रैल को आसाम पी०एस०पी०के सेक्रेटरी ने चर्चा में बताया कि नागाओं के क्षेत्र में सरकार कुछ कर नहीं सकी है। फौज के हाथ में वहाँ का जनजीवन चला गया है। इससे नागा और भी क्षुब्ध हैं। विदेशी सत्ताएँ उन्हें और उभाड़ रही हैं। वहाँ पर तो कांग्रेस, पी० एस०पी०, भूदान आदि सभी वर्ग के लोगों को सेवा-कार्य तथा अहिंसा का संदेश फैलाने के लिए पहुँच जाना चाहिए। मंत्री महोदय ने इस प्रकार के कार्यक्रम में मदद देने का अभिवचन दिया। ८ अप्रैल को आसाम के शिक्षा-मंत्री श्री आभिलोदासजी से चर्चा हुई। उन्होंने कहा, "नागा पूरी आजादी चाहते हैं, हम किसी सूरत में उन्हें पूरी आजादी दे नहीं पायेंगे। यह मर्ज अंग्रेजों का बढ़ाया है, क्योंकि जब वे भारत छोड़ रहे थे, उस समय वे नागा हिल्स और मणिपुर स्टेट आदि अपने कब्जे में रखना चाहते थे, इसलिये कि यह प्रदेश चीन, बर्मा और भारत की सीमा पर पड़ता है। क्रिश्चियन धर्म का काफी प्रभाव नागाओं पर है। वे हिन्दुओं के अधीन रहना पसंद नहीं करते।"

१४ अप्रैल को चीफ कमिश्नर ने कहा—"नागा लोगों से समझौते का कोई सर्वमान्य रास्ता नहीं निकल पाया है। फौजी कार्यवाही से भी नागाओं को काफी क्षोभ है। ऐसी परिस्थिति में विनोबाजी आपके जैसे कुछ लोगों को नागा लोगों के बीच प्रेम और शांतिका संदेश पहुँचाने के लिए भेज सकते हैं। यदि कोई शांति और प्रेम के संदेश के साथ निर्मल और उदार दिल से वहाँ जाय, तो वे नागाओं का हृदय-परिवर्तन कर सकते हैं। अभी तक तो फौजी अफसरों से ही उनका पाला पड़ा है! शांति के अग्रदूतों को वहाँ भगवान् में भरोसा रख कर काम करना चाहिए।"

नागा लोग बहुत परिश्रमी होते हैं। लेकिन उनके परिश्रम का खूब शोषण होता है। पुलिस-फौज की कार्यवाही के कारण उनकी बहू-बेटियाँ भी सुरक्षित नहीं हैं। नागाओं में भंगी नहीं होते, लेकिन उनसे जबरदस्ती भंगी का काम लिया जाता है। अंग्रेजों ने इनके बीच काम किया, अतः प्रत्येक पढ़ा-लिखा नागा क्रिश्चियन होता है। गो-माँस, सूअर सभी खाते हैं। हिन्दू लोग इन्हें अपने से अलग और घृणित समझते हैं। इन सब अन्यायों, अत्याचारों और अलगाव की भावना की इतनी जबरदस्त प्रतिक्रिया इन पर हुई है कि वे समझौते के लिए तैयार नहीं हैं। उनकी दो माँगे हैं: सेना हटे और संपूर्ण स्वाधीनता दी जाय।

श्री विमला बहन के प्रभावशाली प्रवचनों के परिणामस्वरूप सहृदय नागरिकों ने नागा-समस्या के समाधान के लिए प्रेम और अहिंसा का रास्ता श्रेयस्कर और अति उत्तम समझा है।

बंबई की ता० १८ अप्रैल की भूदान-सभा

ता० १८ अप्रैल को भूदान-जयंती के निमित्त बंबई में चौपाटी पर एक भूदान-सभा का आयोजन किया गया था, जिसमें श्री डांगे एवं श्री एस. एम. जोशी न आ सकने के कारण ही श्रोताओं ने हुल्लड़ मचाना शुरू किया और पत्थर भी फेंके, जिससे एक बहन को खासी चोट आयी। सभा में शांति स्थापन करने के प्रयत्न हुए, पर अपयश मिला और सभा समाप्त कर देनी पड़ी। श्रोताओं का कहना था कि इन नेताओं का नाम झूठ-मूठ ही क्यों जाहिर किया गया?

हम अभी कार्यवश बंबई गये थे, तो संचालकों से प्रत्यक्ष जानकारी ली। उन्होंने बताया कि श्री डांगेजी ने कहा था कि 'वे बंबई में उस रोज होंगे, तो सभा में अवश्य आवेंगे।' उस रोज बंबई में वे रहेंगे, ऐसी ही उम्मीद थी, पर दुर्भाग्य से उन्हें उसी रोज अन्यत्र जाना पड़ा। श्री एस. एम. जोशीजी के भी उपस्थित रहने की बात थी, पर जब अनेक प्रयत्नों के बाद इन महानुभावों के न आ सकने का निश्चित पता चला, तब जनता को वैसी खबर करने का अवसर संचालकों को नहीं मिल सका और प्रत्यक्ष सभा में तो न इन नेताओं के पत्र ही जनता सुनने को राजी हुई और न ही श्री डांगेजी के प्रतिनिधि कॉमरेड मीरजकर का भाषण ही सुना।

स्पष्ट है कि सभा में इन नेताओं के उपस्थित रहने की बात संचालकों ने न तो झूठ-मूठ ही जाहिर की, न ही ये दोनों नेता जान-बूझ कर या किसी मतभेद के कारण अनुपस्थित रहे! इनकी पूरी सहानुभूति भूदान के प्रति रही है। वस्तुतः प्रांतरचना-प्रकरण के कारण बंबई की जनता में स्फोटक भावनाएँ काफी आ गयी हैं, फलतः दुर्भाग्य से संचालकों की सफाई सुनने को भी वह उस रोज राजी नहीं हो सकी!

काशी —लक्ष्मीनारायण भारतीय

बाबा राघवदासजी का सर्वोदय-सम्मेलन में आगमन!

पूज्य बाबा राघवदासजी ने १३ अप्रैल १९५५ से २ वर्ष की अखण्ड पदयात्रा का संकल्प लेकर फतहपुर से पदयात्रा का आरंभ किया था। इस २ वर्ष की अवधि में अनेक कष्टों का सामना करते हुए पूज्य बाबाजी की पदयात्रा अखण्ड चलती रही। इन दिनों उनका स्वास्थ्य बहुत ही गिर गया था। यात्रा का संकल्प पूरा हो गया था, फिर भी अखण्ड यात्रा चालू ही थी। ता० २६ से २९ अप्रैल तक उत्तरप्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन-झांसी में बाबाजी का मुकाम हुआ। आगे मध्यप्रदेश, विदर्भ और महाराष्ट्र की उनकी पदयात्रा का कार्यक्रम बन चुका था। इस बीच भूदान-यज्ञ के सेनापति का हुक्म पहुँचा कि एक संकल्प होने के बाद, नयी यात्रा शुरू करने के पूर्व सर्वोदय-सम्मेलन, कालड़ी में विचार-विनिमय के लिए वे उपस्थित हों। जैसे सिपाही के लिए सेनापति का हुक्म प्रमाण होता है, उसी निष्ठा से पूज्य बाबा राघवदासजी ने अपने सेनापति को तार कर दिया कि वे ता० ६ का एरनाकुलम् में उनके पास उपस्थित होंगे।

पूज्य बाबाजी ता० ३० अप्रैल को वर्धा पहुँचेंगे। पूज्यबापू की कुटिया में राष्ट्रपिता को श्रद्धांजली अर्पित करेंगे। ता० ३ मई को सुबह हैदराबाद पहुँचेंगे। भूदान की गंगोत्री पोचमपल्ली का दर्शन करेंगे। ता० ४ की शाम को ग्रांडट्रंक से निकल कर मद्रास होते हुए ता० ६ को कोचीन-एक्सप्रेस से पूज्य विनोबाजी के पास एरनाकुलम पहुँचेंगे। अखण्ड पदयात्रा के कुछ साथी-सेवक लोग भी साथ रहेंगे।

१७ मई का अंक बंद

सर्वोदय-सम्मेलन के कारण "भूदान-यज्ञ" का १७ मई का अंक बंद रहेगा। —सं०

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	तमिलनाड की विदाई-वेला में	विनोबा	२
२.	"इमं पश्यत"—'इसे देखिये"	लोचनदास मदन	३
३.	स संन्यासी च योगी च	शिवाजी भावे	४
४.	समाज और भूमि-व्यवस्था : १.	टॉल्स्टाय	५
५.	विरोधों का समन्वय ही सर्वोदय!	विनोबा	६
६.	सर्वोदय की दृष्टि		
	१—शतंजीवी महर्षि धोंडो केशव कर्वे	दादा धर्माधिकारी	६
	२—कम्युनिज्म : एक नयी मोड़ पर	"	६
७.	कन्याकुमारी के श्रीचरणों में—	महादेवी	८
८.	क्रान्ति के लिए सबका मत-परिवर्तन आवश्यक	विनोबा	८
९.	गोसंवर्धन का आधार : ग्रामदान	द० मं० कुरडे	९
१०.	कर्नाटक में ग्रामदान की प्रगति	बाबू कामत	९
११.	तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से—	मीरा व्यास	१०
१२.	भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण	—	११
१३.	श्री विमला बहन की आसाम यात्रा-आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी

www.vinoba.in